प्रवचन-वर्षा

-: प्रवचनकार एवं लेखक :-

पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

प्रवचन-वर्षा

प्रवचनकार एवं लेखक

परम शासन प्रभावक, महाराष्ट्र देशोद्धारक
स्व. पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म. सा. के
शिष्यरत्न अध्यात्मयोगी, निःस्पृह शिरोमणि पूज्यपाद पंन्यासप्रवर
श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य के चरम शिष्यरत्न
प्रभावक प्रवचनकार एवं हिन्दी साहित्यकार, मरुधररत्न
पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

199

प्रकाशक

दिव्य संदेश प्रकाशन

C/o. सुरेन्द्र जैन,
205, सोना चेंबर्स, 507-509, जे.एस.एस. रोड,
चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (E),
मुंबई-400 002. Tel. 022-2203 45 29 Mobile : 9892069330

आवृत्ति : प्रथम • मूल्य : 60/- रु. • प्रतियां : 3250
दि. 2-1-2018 • विमोचन स्थल : सुशील धाम-बेंगलोर.

आजीवन सदस्य योजना

आजीवन सदस्यता

शुल्क - 2500/- रु.

- आप जैन धर्म के रहस्य - जैन इतिहास - जैन तत्त्वज्ञान - जैन आचार मार्ग, प्रेरणादायी कथाएँ आदि का अध्ययन करना चाहते हो तो आज ही आप दिव्य संदेश प्रकाशन मुम्बई की आजीवन सदस्यता प्राप्त कर लें। सदस्य बनते ही अध्यात्मयोगी निःस्पृह शिरोमणि स्व. पूज्यपाद पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री एवं उन्हीं के चरम शिष्यरत्न प्रवचन प्रभावक परम पूज्य *आचार्यदेव श्रीमद् विजय* रत्नसेनसूरीश्वरजी *म. सा.* द्वारा आलेखित उपलब्ध **10** पुस्तकें दी जाएगी और अर्हद् दिव्य संदेश मासिक तथा भविष्य में हिन्दी भाषा में प्रकाशित पुस्तकें घर बैठे प्राप्त होगी। आप आजीवन सदस्यता शुल्क मुंबई या बैंगलोर पते पर दिव्य संदेश प्रकाशन-मुंबई के नाम से चैक व ड्राफ्ट से भेजें।

प्राप्ति स्थान

1. **चंदन एजेंसी M. 9820303451**
607, चीरा बाजार, ग्राउंड फ्लोर, मुंबई-400 002.
Tel. O. 2205 6821

2. **चेतन हसमुखलालजी मेहता**
भायंदर. **M. 9867058940**

3. **श्री आदिनाथ जैन श्वेतांबर संघ**
श्री सुरेशगुरुजी M. 98441 04021
नं.4, Old No. 38, फ्लोर,रंगराव रोड, शंकरपुरम्, बैंगलुर-560 004. (कर्नाटक)
राजेश मो.9986846379

आजीवन सदस्यता शुल्क

Rs. 2500/- भिजवाने का पता एवं पुस्तक-प्राप्ति-स्थान :

(1) दिव्य संदेश प्रकाशन

C/o. सुरेन्द्र जैन, 205, सोना चेंबर्स, 507-509, जे.अेस.अेस. रोड, चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (E), मुंबई-2. **Tel. 022-2203 45 29**

(2) दिव्य संदेश प्रचारक

प्रकाश बड़ोल्ला, 52, 3rd Cross, शंकरमाट रोड, शंकरपुरा, बैंगलोर-560 004. Tel. (O.) 4124 7478 M. 8971230600

(3) राहुल वैद, C/o. अरिहंत मेटल कं., 4403, लोटन जाट गली, पहाड़ी धीरज, सदर बाजार, दिल्ली-110 006. M. 9810353108

प्रकाशक की कलम से...

शा. पुष्पराजजी राजकुमारजी कोठारी-आऊवा-राज. निवासी हाल-विशाखा पट्टनम्-बेंगलोर द्वारा सुशील धाम-बेंगलोर की धन्यधरा पर मरुधर रत्न पू.आ. श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. की तारक निश्रा में आयोजित उपधान तप के मालारोपण महोत्सव प्रसंग पर पूज्यश्री के आचार्यपद के 8 वें वर्ष में मंगल प्रवेश के शुभ दिन उन्हीं के द्वारा हिन्दी भाषा में आलेखित 199वीं पुस्तक 'प्रवचन वर्षा' का प्रकाशन करते हुए हमें अत्यंत ही हर्ष हो रहा है ।

हमें गर्व और गौरव है कि पूज्यश्री द्वारा हिन्दी भाषा में आलेखित सरल व सुबोध साहित्य भारत देश के अधिकांश हिन्दी भाषी राज्यों में बडे चाव से पढा जा रहा है ।

निकट भविष्य में ही पूज्यश्री की 200 वीं पुस्तक 'अमृतरस का प्याला' का भव्य प्रकाशन होने जा रहा है ।

श्वे. मू. तपागच्छ जैन संघ में विशाल संख्या में श्रमण-श्रमणी वर्ग है । परंतु अधिकांश वर्ग गुजराती समाज में से दीक्षित होने से उनके द्वारा आलेखित साहित्य गुजराती भाषा में विपूल मात्रा में उपलब्ध है हिन्दी भाषी श्रमणों की अल्पता के कारण हिन्दी साहित्य की बहुत ही कमी है । गोडवाड के गौरव, मरुधररत्न पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. अपने संयम जीवन के प्रारंभ से ही हिन्दी साहित्य सर्जन में प्रयत्नशील रहे है । उनके द्वारा आलेखित साहित्य में विविधता है ।

वे कुशल विवेचनकार भी है । सामायिक सूत्र, चैत्यवंदन सूत्र, आलोचना सूत्र, श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र, आनंदघन चोबीसी, आनंदघनजी के पद, पू. यशोविजयजी म. की चोबीसी आदि के ऊपर उन्होंने खूब सुंदर व सरलशैली में विवेचन भी किया है ।

वे कुशल प्रवचनकार और अवतरणकार भी है । जैन रामायण और महाभारत पर दिए गए उनके जाहिर प्रवचनों का तथा जैन पर्व

प्रवचन, पांच-प्रवचन तथा अन्य जाहिर प्रवचनों का उन्होंने स्वयं ने आलेखन भी किया है।

वे कुशल भावानुवादक हैं-शांत सुधारस, श्राद्धविधि, धर्मसंग्रह, गुणस्थानक क्रमारोह, चार प्रकरण, तीन भाष्य, चार कर्मग्रंथ जैसे प्राचीन ग्रंथों का उन्होंने सरस भावानुवाद व विवेचन भी किया है।

वे प्रभावक कथा-आलेखक भी हैं-चौबीस तीर्थंकर चरित्र, कर्मन् की गत न्यारी (महाबल-मलयासुंदरी चरित्र) आग और पानी (समरादित्य चरित्र) कर्म को नहीं शर्म (भीमसेन चरित्र) तब आंसू भी मोती बन जाते है (सागरदत्त चरित्र) कर्म नचाए नाच (तरंगवती चरित्र) जैसे अनेक चरित्र ग्रंथों का धारावाहिक कहानी का उपन्यास शैली में आलेखन भी किया है।

वे प्रसिद्ध चिंतक भी है, प्रवचन मोती, प्रवचन रत्न, चिंतन-रत्न, नवपद प्रवचन, प्रवचन-धारा, आनंद की शोध, श्रावकाचार प्रवचन में उनके प्रवचनों का सुंदर संकलन है।

वे प्रसिद्ध कहानीकार भी हैं प्रिय कहानियाँ, मनोहर कहानियाँ, सरल कहानियाँ, सरस कहानियाँ, आदर्श कहानियाँ, ऐतिहासिक कहानियाँ, मधुर-कहानियाँ, प्रेरक कहानियाँ आदि में उन्होंने अत्यंत ही सुंदर हृदय स्पर्शी कहानियों का आलेखन किया है।

जैन शासन के ज्योतिर्धर, महान् ज्योतिर्धर, तेजस्वी सितारें गौतमस्वामी-जंबुस्वामी आदि में उन्होंने जैन शासन के महान् प्रभावक पुरुषों के जीवन चरित्रों का सुंदर आलेखन भी किया है।

वे कुशल संपादक भी है-युवाचेतना विशेषांक, जीवन निर्माण विशेषांक, आहार विज्ञान विशेषांक, श्रावकाचार विशेषांक, श्रमणाचार विशेषांक, सन्नारी विशेषांक, राजस्थान तीर्थ विशेषांक जैसे अनेक विशेषांकों का सफल संपादन भी किया है।

हमें पूर्ण श्रद्धा और विश्वास है कि पूज्य श्री द्वारा आलेखित पूर्व प्रकाशनों की भांति प्रस्तुत प्रकाशन भी अवश्य लोकोपयोगी सिद्ध होगा।

हिन्दी साहित्यकार मरुधररत्न पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. द्वारा आलेखित हिन्दी साहित्य

नं.	पुस्तक नाम	प्रकाशन वर्ष वि.सं.	विषय	विमोचन स्थल
1.	वात्सल्य के महासागर	2038	अध्यात्मयोगी पू. गुरुदेव का जीवन परिचय	बाली
2.	सामायिक सूत्र विवेचना	2039	सामायिक सूत्रों का विवेचन	
3.	चैत्यवंदन सूत्र विवेचना	2040	चैत्यवंदन के सूत्रों का विवेचन	
4.	आलोचना सूत्र विवेचना	2040	इच्छामिठामि आदि सूत्रों का विवेचन	
5.	श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र विवेचन	2041	वंदित्तु सूत्र पर विस्तृत विवेचन	
6.	कर्मन् की गत न्यारी	2041	महाबल-मलयासुंदरी का चरित्र	पूना
7.	आनंदघन चौबीसी विवेचन	2041	पू. आनंदघनजी के 24 स्तवनों का विवेचन	
8.	मानवता तब महक उठेगी	2041	मार्गानुसारिता के 18 गुणों का विवेचन	
9.	मानवता के दीप जलाएं	2043	मार्गानुसारिता के 17 गुणों का विवेचन	
10.	जिंदगी जिंदादिली का नाम है	2044	पू.पादलिप्तसूरिजी आदि चरित्र	कैलास नगर राज.
11.	चेतन ! मोहनींद अब त्यागो	2044	'चेतन ज्ञान अजुवालिए' पर विवेचन	रानीगांव
12.	युवानो ! जागो	2045	धुम्रपान आदि पर विवेचन	रानीगांव
13.	शांत सुधारस-विवेचन भाग 1	2045	8 भावनाओं पर विवेचन	पाली
14.	शांत सुधारस- विवेचन भाग 2	2045	8 भावनाओं पर विवेचन	पाली
15.	रिमझिम रिमझिम अमृत बरसे	2045	लेखों का संग्रह	जयपूर
16.	मृत्यु की मंगल यात्रा	2046	'मृत्यु' विषयक पत्रों का संग्रह	सेवाडी
17.	जीवन की मंगल यात्रा	2046	जीवन की सफलता के उपाय	पिंडवाडा
18.	महाभारत और हमारी संस्कृति-1	2046	महाभारत पर जाहिर-प्रवचन	जयपुर
19.	महाभारत और हमारी संस्कृति-2	2046	महाभारत पर जाहिर-प्रवचन	पिंडवाडा
20.	तब चमक उठेगी युवा पीढी	2047	नव युवकों को मार्गदर्शन	पिंडवाडा
21.	The Light of Humanity	2047	मार्गानुसारित के गुणों का वर्णन	उदयपुर
22.	अंखियाँ प्रभु दर्शन की प्यासी	2047	पू.यशो.वि. की चौबीसी पर विवेचन	शंखेश्वर
23.	युवा चेतना विशेषांक	2047	व्यसनादि पर लेखों का संग्रह	उदयपुर
24.	तब आंसू भी मोती बन जाते है	2047	सागरदत्त चरित्र	उदयपुर
25.	शीतल नहीं छाया रे (गुज.)	2047	गुजराती वार्ताओं का संग्रह	
26.	युवा संदेश	2048	नवयुवकों को शुभ संदेश	पाटण

नं.	पुस्तक नाम	प्रकाशन वर्ष वि.सं.	विषय	विमोचन स्थल
27.	रामायण में संस्कृति भाग 1	2048	रतलाम में दिए जाहिर-प्रवचन	राजकोट
28.	रामायण में संस्कृति-भाग 2	2048	रतलाम में दिए जाहिर-प्रवचन	जामनगर
29.	जीवन निर्माण विशेषांक	2049	सद्गुणोपासना संबंधी लेख	जामनगर
30.	श्रावक जीवन दर्शन	2049	श्राद्धविधि ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद	गिरधरनगर
31.	The Message for the youth	2049	युवा संदेश का अंग्रेजी अनुवाद	गिरधरनगर
32.	यौवन सुरक्षा विशेषांक	2049	ब्रह्मचर्य विषयक लेखों का संग्रह	गिरधरनगर
33.	आनंद की शोध	2050	5 जाहिर प्रवचन	गिरधरनगर
34.	आग और पानी भाग-1	2050	समरादित्य चरित्र कथा	माटुंगा
35.	आग और पानी भाग-2	2050	समरादित्य चरित्र कथा	माटुंगा
36.	शत्रुंजय यात्रा (तृतीय आवृत्ति)	2068	शत्रुंजय महिमा एवं यात्रा विधि	पालीताणा
37.	सवाल आपके, जवाब हमारे	2050	जैन धर्म विषयक प्रश्नोत्तरी	माटुंगा
38.	जैन विज्ञान	2050	नव तत्व के पदार्थों पर विवेचन	थाणा
39.	आहार विज्ञान विशेषांक	2050	जैन आहार पद्धति	थाणा
40.	How to live true life ?	2050	जीवन की मंगल यात्रा का अनुवाद	थाणा
41.	भक्ति से मुक्ति	2050	प्रभु भक्ति के स्तवन आदि	थाणा
42.	आओ ! प्रतिक्रमण करे	2051	राई व देवसी आदि प्रतिक्रमण	थाणा
43.	प्रिय कहानियाँ	2051	कहानियों का संग्रह	मुलुंड
44.	अध्यात्म योगी पूज्य गुरुदेव	2051	पू. श्री के जीवन विषयक लेख	भायखला
45.	आओ ! श्रावक बने	2051	श्रावक के 12 व्रतों का निर्देश	कल्याण
46.	गौतम स्वामी-जंबुस्वामी	2051	महापुरुषों का विस्तृत जीवन	कल्याण
47.	जैनाचार विशेषांक	2051	जैन आचार विषयक लेख	कल्याण
48.	हंसश्राद्धव्रत दीपिका (गु.)	2051	श्रावक के 12 व्रत	कल्याण
49.	कर्म को नहीं शर्म	2052	भीमसेन चरित्र	कुर्ला
50.	मनोहर कहानियाँ	2052	प्रेरणादायी 90 कहानियाँ	कुर्ला
51.	मृत्यु-महोत्सव	2052	मृत्यु पर विवेचन	दादर
52.	Chaitya Vandan Sootra	2052	अंग्रेजी हिन्दी में मूल सूत्र	
53.	सफलता की सीढियाँ	2052	श्रावक के 21 गुणों पर विवेचन	दादर
54.	श्रमणाचार विशेषांक	2052	साधु जीवनचर्या विषयक	
55.	विविध देववंदन	2052	दीपावली आदि देववंदन	भायंदर
56.	नवपद-प्रवचन	2052	नवपद के प्रवचन	चीराबाजार

नं.	पुस्तक नाम	प्रकाशन वर्ष वि.सं.	विषय	विमोचन स्थल
57.	ऐतिहासिक कहानियाँ	2052	भरत आदि 19 महापुरुष	सायन
58.	तेजस्वी सितारे	2053	स्थूलभद्र आदि छ महापुरुष	सायन
59.	सन्नारी विशेषांक	2053	सन्नारी विषयक लेख संग्रह	सायन
60.	मिच्छामि दुक्कडम्	2053	क्षमापना पर उपदेश	सायन
61.	Panch Pratikraman Sootra	2053	पंच प्रतिक्रमण मूल सूत्र	सायन
62.	जीवन ने जीवी तूं जाण (गुज.)	2053	श्रद्धांजलि लेखों का संग्रह	सायन
63.	आवो ! वार्ता कहुं (गुज.)	2053	विविध वार्ताओं का संग्रह	सायन
64.	अमृत की बुंदे	2054	प्रेरणादायी उपदेश	बांद्रा (ई)
65.	श्रीपाल-मयणा	2054	श्रीपाल और मयणा सुंदरी	थाणा
66.	शंका और समाधान-भाग-1	2054	1200 प्रश्नों के जवाब	थाणा
67.	प्रवचन धारा	2054	पांच जाहिर प्रवचन	धूले
68.	राजस्थान तीर्थ विशेषांक	2054	राजस्थान के तीर्थ	धूले
69.	क्षमापना	2054	क्षमापना संबंधी चिंतन	धूले
70.	भगवान महावीर	2054	महावीर प्रभु के 27 भव	धूले
71.	आओ ! पौषध करें	2055	पौषध की विधि	चिंचवड
72.	प्रवचन मोती	2054	उपदेशात्मक वचन	चिंचवड
73.	प्रतिक्रमण उपयोगी संग्रह	2055	चैत्यवंदन-स्तुति संग्रह	चिंचवड
74.	श्रावक कर्तव्य भाग 1	2055	श्रावक के 18 कर्तव्यों पर विवेचन	कराड
75.	श्रावक कर्तव्य भाग 2	2055	श्रावक के 18 कर्तव्यों पर विवेचन	कराड
76.	कर्म नचाए नाच	2056	महासती तरंगवती चरित्र	सोलापूर
77.	माता-पिता	2056	संतानों के कर्तव्य	सोलापूर
78.	प्रवचन-रत्न	2056	प्रवचनों का आंशिक अवतरण	पूना
79.	आओ ! तत्वज्ञान सीखे !	2056	जैन तत्वज्ञान के रहस्य	चिंचवड स्टे.
80.	क्रोध आबाद तो जीवन बरबाद	2056	क्रोध के कटु परिणाम	चिंचवड स्टे.
81.	जिन शासन के ज्योतिर्धर	2057	प्रभावक महापुरुष	चिंचवड गांव
82.	आहार क्यों और कैसे ?	2057	आहार संबंधी जानकारी	दहीसर
83.	महावीर प्रभु का सचित्र जीवन	2057	सचित्र संपूर्ण जीवन	थाणा
84.	प्रभु पूजन सुख संपदा	2057	प्रभु दर्शन पूजन विधि	भिवंडी
85.	भाव श्रावक	2057	भाव श्रावक के 17 गुणों पर विवेचन	भायंदर

नं.	पुस्तक नाम	प्रकाशन वर्ष वि.सं.	विषय	विमोचन स्थल
86.	महान् ज्योतिर्धर	2057	रामचंद्रसूरीश्वरजी का जीवन	भायंदर
87.	संतोषी नर सदा सुखी	2058	लोभ के कटु परिणाम	गोरेगांव
88.	आओ ! पूजा पढाए !	2058	चोसठ प्रकारी पूजाओं के अर्थ	गोरेगांव
89.	शत्रुंजय की गौरव गाथा	2058	शत्रुंजय के 16 उद्धार	भायंदर
90.	चिंतन मोती	2058	विविध चिंतनों का संग्रह	टिंबर मार्केट-पूना
91.	प्रेरक कहानियाँ	2058	प्रेरणादायी कहानियाँ व नाटक	पूना
92.	आईवडिलांचे उपकार	2058	'माता-पिता' का मराठी अनुवाद	पूना
93.	महासतियों का जीवन संदेश	2059	सुलसा आदि के चरित्र	देहुरोड
94.	आनंदघनजी पद विवेचन	2059	आनंदघनजी के 18 पदों पर विवेचन	पूना
95.	Duties towards Parents	2059	माता-पिता का अंग्रेजी	पूना
96.	चौदह गुणस्थानक	2059	'गुणस्थानक क्रमारोह विवेचन	येरवडा
97.	पर्युषण अष्टाह्निक प्रवचन	2059	पर्युषणपर्व के प्रवचन	येरवडा
98.	मधुर कहानियाँ	2059	कुमारपाल आदि का चरित्र	येरवडा
99.	पारस प्यारो लागे	2060	पार्श्व प्रभु के 10 भव आदि	येरवडा
100.	बीसवीं सदी के महानयोगी	2060	पूं.पं.श्री भद्रंकरविजयजी स्मृति ग्रंथ	दीपक ज्योतिटॉवर
101.	अमरवाणी	2060	पूं.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म. के प्रेरक प्रवचन	दीपक ज्योतिटॉवर
102.	कर्म विज्ञान	2060	'कर्म विपाक' पर विवेचन	दीपक ज्योतिटॉवर
103.	प्रवचन के बिखरे फूल	2061	प्रवचन के सारभूत अवतरण	बोरीवली (ई)
104.	कल्पसूत्र के हिन्दी प्रवचन	2061	कल्पसूत्र पर दिए प्रवचन	थाणा
105.	आदिनाथ शांतिनाथ चरित्र	2061	प्रभु के भवों का वर्णन	थाणा
106.	ब्रह्मचर्य	2061	ब्रह्मचर्य पर विवेचन	श्रीपालनगर, मुंबई
107.	भाव सामायिक	2061	सामायिक सूत्रों पर विवेचन	श्रीपालनगर, मुंबई
108.	राग म्हणजे आग	2061	'क्रोध आबाद' का मराठी	श्रीपालनगर, मुंबई
109.	आओ ! उपधान-पौषध करे	2062	उपधान संबंधी विस्तृत जानकारी	भिवंडी
110.	प्रभो ! मन मंदिर पधारो	2062	प्रभु भक्ति विषयक चिंतन	आदीश्वर धाम
111.	सरस कहानियाँ	2062	नल-दमयंती आदि कहानियाँ	परेल मुंबई
112.	महावीर वाणी	2062	आगमोक्त सूक्तियों पर विवेचन	कर्जत
113.	सद्गुरु उपासना	2062	सद्गुरु का स्वरुप	कर्जत

नं.	पुस्तक नाम	प्रकाशन वर्ष वि.सं.	विषय	विमोचन स्थल
114.	चिंतनरत्न	2062	विविध चिंतन	कर्जत
115.	जैनपर्व प्रवचन	2063	कार्तिक पूनम आदि पर्वों के प्रवचन	कर्जत
116.	नींव के पत्थर	2063	अध्यात्म प्राप्ति के 15 गुण	आदीश्वर धाम
117.	विखुरलेले प्रवचन मोती	2063	प्रवचन के बिखरे फूल का मराठी	वणी
118.	शंका समाधान भाग-2	2063	1200 प्रश्नों के जवाब	आदीश्वर धाम
119.	श्रमण शिल्पी प्रेमसूरीश्वरजी	2063	पूज्यश्री का संक्षिप्त जीवन	भायंदर
120.	भाव चैत्यवंदन	2063	जग चिंतामणि से सूत्रों पर विवेचन	भिवंडी
121.	Youth will shine then	2063	'तब चमक उठेगी' का अंग्रेजी अनुवाद	भिवंडी
122.	नव तत्त्व विवेचन	2063	'नवतत्त्व' पर विवेचन	भिवंडी
123.	जीव विचार विवेचन	2063	'जीव विचार' पर विवेचन	भिवंडी
124.	भव आलोचना	2064	श्रावक जीवन संबंधी आलोचना स्थल	
125.	विविध पूजाएं	2064	नवपद, आदि पूजाओं का भावानुवाद	आदीश्वर धाम
126.	गुणवान बनो	2064	18 पाप स्थानकों पर विवेचन	महावीर धाम
127.	तीन भाष्य	2064	तीन भाष्यों का विवेचन	आदीश्वर धाम
128.	विविध तपमाला	2064	प्रचलित तपों की विधियां	डोंबिवली
129.	महान् चरित्र	2064	पेथडशा आदि का जीवन	कल्याण
130.	आओ ! भावयात्रा करे	2064	शत्रुंजय आदि भाव यात्राएं	कल्याण
131.	मंगल स्मरण	2064	नवस्मरण आदि संग्रह	कल्याण
132.	भाव प्रतिक्रमण भाग-1	2065	वंदित्तु तक हिन्दी विवेचन	विक्रोली
133.	भाव प्रतिक्रमण भाग-2	2065	आयरिय उवज्झाए से विवेचन	विक्रोली
134.	श्रीपालरास और जीवन	2065	श्रीपाल मयणा का रास एवं जीवन	थाणा
135.	दंडक विवेचन	2065	दंडक सूत्र पर हिन्दी विवेचन	कुर्ला
136.	पर्युषण प्रतिक्रमण करें	2065	संवत्सरी प्रतिक्रमण विधि	भिवंडी
137.	सुखी जीवन की चाबियाँ	2066	मार्गानुसारिता के 35 गुण (कमलदर्शन)	मुंबई
138.	पाँच प्रवचन	2066	पाँच जाहिर प्रवचन	मोहना
139.	सज्झायों का स्वाध्याय	2066	सज्झायों का संग्रह	मोहना
140.	वैराग्य शतक	2066	वैराग्य पोषक विवेचन	मलाड
141.	गुणानुवाद	2066	10 आचार्यों का जीवन परिचय	रोहा
142.	सरल कहानियाँ	2066	प्रेरणादायी कथाएं	रोहा

नं.	पुस्तक नाम	प्रकाशन वर्ष वि.सं.	विषय	विमोचन स्थल
143.	सुख की खोज	2066	सुख संबंधी चिंतन	रोहा
144.	आओ ! संस्कृत सीखें भाग-1	2067	सिद्धहैम प्रवेशिका-भाग-1	थाणा
145.	आओ ! संस्कृत सीखें भाग-2	2067	सिद्धहैम प्रवेशिका-भाग-2	थाणा
146.	आध्यात्मिक पत्र	2067	पू.पं.श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. के पत्रों का हिन्दी अनुवाद	थाणा
147.	शंका और समाधान भाग-3	2067	लगभग छोटे मोटे 750 प्रश्नों के जवाब	थाणा
148.	जीवन शणगार प्रवचन	2067	संस्कार शिबिर-रोहा के प्रवचन	धारावी
149.	प्रात:स्मरणीय-महापुरुष भाग-1	2067	महापुरुषों के चरित्र	भायंदर
150.	प्रात:स्मरणीय-महापुरुष भाग-2	2067	महापुरुषों के चरित्र	भायंदर
151.	प्रात:स्मरणीय-महासतियाँ भाग-1	2067	महासतियों के चरित्र	भायंदर
152.	प्रात:स्मरणीय-महासतियाँ भाग-2	2067	महासतियों के चरित्र	भायंदर
153.	ध्यान साधना	2068	ध्यान शतक-आराधना धाम	हालार
154.	श्रावक आचार दर्शक	2068	धर्म संग्रह का हिन्दी अनुवाद	राजकोट
155.	अध्यात्माचा सुगंध (मराठी)	2068	नीव के पत्थर का मराठी अनुवाद	नासिक
156.	इन्द्रिय पराजय शतक	2068	वैराग्य वर्धक	पालीताणा
157.	जैन शब्द कोष	2068	शास्त्रिय शब्दों के अर्थ	पालीताणा
158.	नया दिन-नया संदेश	2069	तिथि अनुसार दैनिक सुविचार	पालीताणा
159.	तीर्थ यात्रा	2069	शत्रुंजय गिरनार तीर्थ महिमा	हस्तगिरि तीर्थ
160.	महामंत्र की साधना	2069	चिन्तन	पिन्डवाडा
161.	अजातशत्रु अणगार	2069	श्रद्धाजंली लेख	भद्रंकर नगर-लुणावा
162.	प्रेरक प्रसंग	2069	कहानियां	बाली
163.	The way of Metaphysical Life	2069	नीव के पत्थर का English अनुवाद	बाली
164.	आओ ! प्राकृत सीखे भाग-1	2070	प्राकृत प्रवेशिका	सेसली तीर्थ
165.	आओ ! प्राकृत सीखे भाग-2	2070	Guide Book	सेसली तीर्थ
166.	आओ ! भाव यात्रा करे ! भाग-2	2070	68 तीर्थ भावयात्रा	बेडा तीर्थ
167.	Pearls of Preaching	2070	प्रवचन मोती का अनुवाद	नाकोडा तीर्थ
168.	नवकार चिंतन	2070	चिंतन	उदयपूर
169.	आओ दुर्ध्यान छोडे ! भाग-1	2070	दुर्ध्यान विषय पर विवेचन	घाणेराव
170.	आओ दुर्ध्यान छोडे ! भाग-2	2070	63 प्रकार के दुर्ध्यान विषय पर विवेचन	घाणेराव

नं.	पुस्तक नाम	प्रकाशन वर्ष वि.सं.	विषय	विमोचन स्थल
171.	परम तत्त्व की साधना भाग-1	2071	चिन्तन कीर्ति स्थंभ	घाणेराव
172.	रत्न संदेश भाग-1	2071	दैनिक सुविचार	बाली
173.	गागर मे सागर-1	2071	बाली तथा घाणेराव के प्रवचन अंश	पालीताणा
174.	रत्न संदेश भाग-2	2071	तारीख अनुसार दैनिक सुविचार	पालीताणा
175.	My Parents	2071	माता-पिता का English अनुवाद	पालीताणा
176.	श्रावकाचार प्रवचन-1	2071	श्रावक कर्तव्य	पालीताणा
177.	श्रावकाचार प्रवचन-2	2071	श्रावक कर्तव्य	पालीताणा
178.	परम तत्त्व की साधना भाग-2	2071	पं.श्री भद्रंकरवि.म. का चिंतन	पालीताणा
179.	परम तत्त्व की साधना भाग-3	2071	पं.श्री भद्रंकरवि.म. का चिंतन	पालीताणा
180.	बाली चातुर्मास विशेषांक	2069	बाली चातुर्मास	बाली
181.	उपधान स्मृति विशेषांक	2072	पालीताणा में उपधान	पालीताणा
182.	नवपद आराधना	2072	नवपद के 11 प्रवचन	लोढा धाम
183.	आत्म उत्थान का मार्ग भाग-1	2072	पं.श्री भद्रंकरवि.म. का चिंतन	गुंदेचा गार्डन
184.	हेमचंद्राचार्य और कुमारपाल	2072	जीवन चरित्र	डोंबिवली
185.	आईचे वात्सल्य	2072	माता-पिता का मराठी अनुवाद	नासिक
186.	आत्म उत्थान का मार्ग भाग-2	2072	पं.श्री भद्रंकरवि. का चिंतन	नासिक
187.	जैन-संघ व्यवस्था	2072	देव द्रव्य आदि की व्यवस्था	नासिक
188.	चौबीस तीर्थंकर चरित्र भाग-1	2074	1 से 16 तीर्थंकरों के चरित्र	नासिक
189.	चौबीस तीर्थंकर चरित्र भाग-2	2074	17 से 24 तीर्थंकरों के चरित्र	नासिक
190.	संस्मरण	2073	संयम जीवन के अनुभव	गोकाक
191.	संबोह सित्तरि	2073	वैराग्य का अमृतकुंभ	गोकाक
192.	विवेकी बनों !	2073	विवेक गुण पर विवेचन	राणे बेन्नुर
193.	आत्म उत्थान का मार्ग भाग-3	2073	पू.पं. श्री भद्रंकरवि. म.सा.का चिंतन	बेंगलोर
194.	लघु संग्रहणी	2073	(जैन भूगोल)	बेंगलोर
195.	समाधि मृत्यु	2073	उपदेश	बेंगलोर
196.	कर्म ग्रन्थ भाग-2	2073	विवेचन	बेंगलोर
197.	कर्म ग्रन्थ भाग-3	2073	विवेचन	बेंगलोर
198.	आदर्श कहानियां-3	2074	कहानियां	बेंगलोर
199.	प्रवचन वर्षा	2074	प्रवचन के बिंदु	बेंगलोर

लेखक की कलम से...

इस जगत में प्रकृष्ट वचन तीर्थंकर परमात्माओं के की होते हैं, क्योंकि वे सर्वज्ञ और वीतराग होते है ।

सर्वज्ञ होने से वे जगत् के सभी पदार्थों के सभी पर्यायों को प्रत्यक्ष देखते है तो वीतराग होने से वे कभी भी झूठ नही बोलते हैं ।

जब तक आत्मा छद्मस्थ रहती हैं, तब तक असत्य उच्चारण की संभावना रहती है । इसलिए तारक तीर्थंकर परमात्मा अपनी छद्मस्थ अवस्था में मौन ही रखते हैं । असत्य का अश भी नहीं होने से तीर्थंकर के वचन को प्रवचन अर्थात् प्रकृष्ट वचन कहते हैं । तीर्थंकर परमात्मा के वियोग में गणधर आदि आचार्य भगवंत ही प्रभु वचनों का प्रचार-प्रसार करते हैं । आचार्य आदि गुरु भगवंत भी प्रभु के वचनों के अनुसार ही उपदेश देते है, इसलिए उनके उपदेश को भी **'प्रवचन'** कहते है । जंबू स्वामी को उपदेश देते समय सूधर्मास्वामी भगवंत कहते है, ``हे आयुष्यमान् जंबू ! मैंने प्रभु महावीर के पास से जो सुना हैं, वही मैं तुझे सुना रहा हूँ ।''

बस, इसी कम से सुधर्मास्वामी की पाट पर बिराजमान होकर पूज्य आचार्य आदि गुरु भगवंत भी वही उपदेश देते है, जो प्रभु ने दिया है । प्रभु के वचनों के आधार पर ही भूतकाल में अनेक गीतार्थ गुरु भगवंतों ने अनेक प्रकारण-ग्रंथों का सर्जन किया है और उन्हीं ग्रंथों के आधार पर चातुर्मास दरम्यान प्रवचन देते है ।

वि.सं. 2071 में शत्रुंजय गिरिराज की धन्यधरा पर कस्तुरधाम में चातुर्मास एवं उपधान दरम्यान **'मन्नह जिणाणं'** की सज्झाय एवं सद्धर्म प्राप्ति के 21 गुणों पर जो प्रवचन दिए थे उनका अवतरण **मु. श्री स्थूलभद्रविजयजी** ने किया था-उनको व्यवस्थित कर उन प्रवचनों के मुख्य बिंदुओं को **'प्रवचन वर्षा'** के रुप में प्रकाशित किया जा रहा है । उनमें जो कुछ भी शुभ हैं, वह भवोदधितारक परमोपकारी वात्सल्य वारिधि पूज्यपाद गुरुदेव पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री की दिव्य कृपा वर्षा का ही फल है । प्रभु के वचनों का स्वाध्याय कर सभी आत्माएं प्रभु के बनाए मार्ग का अनुसरण का शीघ्र ही शाश्वतपद के भोक्ता बने, इसी शुभ-कामना के साथ ।

सुशीलधाम-बेंगलोर
मौन एकादशी-2074
दि. 30-11-2017

अध्यात्मयोगी पूज्यपाद परम गुरुदेव
पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी
गणिवर्य चरण शिशु
आचार्य विजय रत्नसेनसूरि

पालीताणा में प्रवचन-वर्षा

1. आज मेचिंग का जमाना है । आज व्यक्ति हर चीज में मेचिंग करने की कोशिश करता है । परंतु आश्चर्य है कि आज स्वभाव Match नही हो पाता है, इसी के परिणाम स्वरुप आज घर-घर में क्लेश बढ़ गए है ।

2. **देश की आजादी के बाद शिक्षण Education में वृद्धि हुई है परंतु संस्कारों का तो हास ही हुआ है ।**

3. कुसंस्कारों का पोषण तो हर भव, हर गति में हुआ है, परंतु जीवन को संस्कारित बनाने का कार्य तो सिर्फ मानव जन्म में ही संभव है ।

4. **आज माता-पिता को बच्चों के शिक्षण की चिंता है । वह कितने प्रतिशत Marks लाता है, उसके लिए चिंतित है । परंतु वह Marks कैसे लाता है ? उसकी कोई चिंता नहीं है ।**

5. प्रभु तो वंदनीय है ही, प्रभु के द्वारा स्थापित तीर्थ भी वंदनीय है ।

6. **वीतराग परमात्मा तो जगत् पर उपकार करते ही है, प्रभु के द्वारा स्थापित शासन भी जगत् पर महान् उपकार करता है ।**

7. जगत् में भाव तीर्थंकर का अस्तित्व मर्यादित काल के लिए होता है । जब कि प्रभु के द्वारा स्थापित तीर्थ का अस्तित्व दीर्घ काल के लिए होता है ।

8. **साक्षात् तीर्थंकर परमात्मा के आलंबन से जितने जीव भव सागर से पार उतरते है । उससे भी अनेक गुणा जीव प्रभु के तीर्थ के आलंबन से तिरते है ।**

9. स्कूटर दो पहियों से चलता है । स्कूटर चलने में दोनों पहिये व्यवस्थित चाहिए । आत्म- साधना के लिए भी देव और गुरु दोनो के आलंबन की आवश्यकता रहती है । एक की भी उपेक्षा उचित नहीं है ।

10. **देव के आलंबन के लिए जिन प्रतिमा है । साक्षात् प्रभु के अभाव में, प्रभु के आलंबन के लिए जिन प्रतिमा ही जरुरी है ।**

11. पू. प्रेमसूरिजी म. ने दीक्षा के बाद तीन संकल्प किए थे (1) रोज एकसना करना (2) फल का त्याग और (3) सूखे मेवे का त्याग ।

12. हॉटल के भोजन में लगभग अभक्ष्य भक्षण ही होता है ।

13. एक काल चक्र में भरत और ऐरावत क्षेत्र में 48-48 तीर्थंकर पैदा होते हैं, जब कि इस काल दरम्यान महाविदेह में असंख्य तीर्थंकर पैदा हो जाते है ।

14. श्रावक को प्रातः पच्चक्खाण तीन की साक्षी में लेने चाहिए । सर्व प्रथम प्रतिक्रमण दरम्यान आत्म साक्षी में, फिर मंदिर में प्रभु की साक्षी में तथा उसके बाद गुरु को वंदन कर गुरु साक्षी में पच्चक्खाण लेना चाहिये ।

15. अन्य स्थान में किए हुए पाप धर्म स्थान में नष्ट हो जाते है जब कि धर्मस्थान में किए पाप वज्र लेप समान हो जाते है ।

16. शील का भंग और गर्भपात, ये स्त्री जीवन के सबसे अधिक भयंकर पाप है ।

17. सूर्यहास खड्ग की प्राप्ति के लिए शुंबक ने 12 वर्ष तक घोर साधना की थी, परंतु उसके साथ माँ का आशीर्वाद नहीं होने से वह लक्ष्मण के हाथों बेमौत मारा गया था ।

18. टी.वी. को हिन्दी में दूर दर्शन कहते है । जो देव और गुरु के दर्शन से हमे दूर ही रखता है ।

19. वनस्पति जन्य आहार और मांसाहार में बहुत बडा अंतर है । मांस हेतु पंचेन्द्रिय जीव का वध किया जाता है । उन जीवों को मारते समय उन्हें अत्यंत ही पीडा का अनुभव होता है । मारने के लिए हृदय भी निष्ठूर होता है । जबकि वनस्पति जन्य आहार में एकेन्द्रिय जीवों की हिंसा होती है । उनकी चेतना अविकसित होने से उन्हें अव्यक्त पीडा होती हैं, उनकी हिंसा में इतनी कठोरता भी नहीं होती है, इसी कारण मांसाहार को त्याज्य माना गया है ।

20. धनहीन गरीब से भी धर्महीन चक्रवर्ती ज्यादा दया पात्र हैं, क्योंकि जीवन में धर्म नहीं है तो यह धन का भार जीवात्मा को अवश्य ही दुर्गति में धकेल देगा ।

21. अनुकूलता में राग होना और प्रतिकूलता में द्वेष होना, यही असमाधि है।

22. परम समाधि भाव के कारण ही मस्तक पर धधकते हुए अंगारे डालने पर भी गजसुकुमाल मुनि बोल सके थे, 'जो मेरा है, वह जलता नहीं और जो जलता हैं, वह मेरा नहीं !'

23. शरीर में जितना अधिक ममत्व भाव होगा उसकी पीडा में उतनी ही अधिक असमाधि होगी।

24. चित्त में समाधि भाव होगा तो चाहे जितनी शारीरिक पीडा में भी व्याकुलता नहीं होगी।

25. लक्ष्मण रेखा के बीच सीता की सुरक्षा थी तो व्रतों के बीच श्रावक की सुरक्षा है।

26. जब तक समय हाथ में होता है, सत्य समझ में नहीं आता और जब सत्य समझ में आता हैं तो समय हाथ में नहीं होता है।

27. महावीर प्रभु के 5% शिष्य मोक्ष में गए और गौतम स्वामीजी के 100%, फिर भी शक्ति तो महावीर प्रभु की ही अधिक थी। गौतमस्वामीजी को जो कुछ भी मिला, वह महावीर प्रभु का ही प्रभाव था।

28. सत्कर्म के बाद पश्चात्ताप करने से पुण्य शून्य हो जाता है और पाप कर्म के बाद पश्चात्ताप करने से पाप शुन्य हो जाता है।

29. पुरुष को परमेष्ठी के पांचों पद प्राप्त हो सकते हैं, जबकि स्त्री को 5 में से 2 ही पद प्राप्त हो सकते हैं।

30. हमारे जीवन में जो भी सुकृत होता है, उसमें देव और गुरु का ही उपकार है। इसीलिए किसी भी सुकृत के लिए हम 'देव-गुरु पसाय' कहते हैं।

31. सुकृत भले ही हमने किया, परंतु, **'देव गुरु पसाय'** बोलने से अपने अहंकार का नाश होता है और अपने जीवन में नम्रता भी आती है।

32. कृतघ्नी और विश्वासघाती ये दो पृथ्वी पर सबसे अधिक भारभूत है। पृथ्वी बडे बडे पर्वतों के भार को वहन कर लेती है। परंतु कृतघ्नी व विश्वासघाती के भार को वहन करने के यह पृथ्वी भी असमर्थ है।

33. जो मात्र खुद का ही विचार करता है, वह राक्षस तुल्य है और जो औरों का भी विचार करता है, वह देवतुल्य है ।

34. देवता भगवान नहीं बन सकते, भगवान बनने की Monopoly एक मात्र मनुष्य के पास में है ।

35. हिंसा जन्य आहार मानवी को क्रूर बनाता है ।
रसप्रद भोजन मानवी को कामी बनाती है ।
सादा भोजन मानवी को सज्जन बनाता है ।

36. कंदमूल अभक्ष्य है क्योंकि उनमें अनंत जीवों की हिंसा है । कंदमूल अनंत जीवों का पिंड हैं, अतः उसके त्याग में ही अपना हित है ।

37. पाप की अनुमोदना से पाप का गुणाकार होता है और पाप की निंदा से पाप का भागाकार होता है ।

38. जीवन में पाप का त्याग करना श्रेष्ठ है । यदि पाप का त्याग न कर सके तो कम से कम पाप का पक्षपात तो न करे ।

39. पापी का उद्धार हो सकता हैं, परंतु पाप को अच्छा माननेवालों का उद्धार कभी नहीं हो सकता हैं ।

40. जैन धर्म हर आत्मा को परमात्मा बनने का अधिकार देता है । भगवान जगत् के निर्माता नहीं, किंतु जगत् के यथार्थ स्वरुप को बतानेवाले है ।

41. जीवन पर्यंत मांसाहार करनेवाला सिंह मरकर चौथी नरक में जा सकता है, जब कि मनुष्य 7वीं नरक में जा सकता है । मनुष्य जीवन में मन के पाप ज्यादा है ।

42. बाह्य परिस्थितियाँ कर्म के अधीन है, अतः उसे बदलना हमारे वश में नहीं है, जब कि मनःस्थिति हमारे अधीन है ।

43. अपने मन के शुभाशुभ भावों को व्यक्त करने की ताकत मनुष्य में है, पशु में नहीं । पशु के पास जीभ है, किंतु जुबान नहीं ।

44. जगत् में सर्वाधिक अपकार और उपकार वाणी से ही होता है ।

45. तारक तीर्थंकर परमात्मा भी शासन की स्थापना वाणी के बल पर ही करते है ।

46. आदिनाथ प्रभु की याद में सबसे दीर्घ तप-वर्षीतप और सबसे कठिन कायकष्ट निन्यावे बार शत्रुंजय की यात्रा करते है। उन आदिनाथ प्रभु का हम पर असीम उपकार है।

47. भूखे को भोजन, प्यासे को पानी, रोगी को दवाई, निर्धन को धन, गरीब को कपडे व मकान रहित को मकान देने से समस्या का समाधान जरुर होता हैं परंतु थोडे समय के लिए, जब कि मोक्ष में इन समस्याओं का सदाकाल के लिए समाधान हो जाता है। इसीलिए सभी दु:खों से मुक्ति का उपाय मोक्ष प्राप्ति ही है।

48. घी के डिब्बे खा लेने पर भी यह जीभ तो लूखी की लूखी है और शक्कर की बोरियाँ खा लेने पर भी यह जीभ फीकी ही है।

49. हॉस्पिटलें और कोर्ट बढते ही जा रहे हैं, फिर भी न रोग कम हो रहे है और न झगडे कम हो रहे है। इन सबका मूल यह जीभ ही है।

50. 42 दोष से रहित गोचरी वापरते समय यदि साधु को भोजन पर राग हो जाय तो वह गोचरी अंगार दोष से दूषित हो जाती है।

51. क्रोध से प्रेम का, मान से विनय का, माया से सरलता का नाश होता हैं, जबकि लोभ से सभी गुणों का नाश होता है। क्षपक-श्रेणी में दसवें गुण स्थानक के अंत में लोभ का नाश होता है।

52. लोभ का निर्मूल नाश करनेवाली आत्मा दसवें गुण स्थानक से सीधे बारहवें गुण स्थानक में जाती है।

53. प्रभु ने अर्थ और काम को छोडा और हम उसी अर्थ और काम के लिए प्रभु के पास जाते है तो सचमायने में प्रभु से हमारा मेल ही नहीं जमता है।

54. प्रभु ने साधना के बल से वीतरागता और सर्वज्ञता प्राप्त की, उसे पाने का हमारा मन हो जाय तो प्रभु के साथ हमारा संबंध जुड सकता है।

55. भूतकाल में हमने प्रभु के पास दीक्षा भी ली, परंतु हमारा अंतर मन नहीं बदला, तो हम वैसे के वैसे रहे।

56. किसी का बूरा चाहने से किसी का बूरा नहीं होता है, परंतु अपना तो बूरा हो ही जाता है।

57. जगत् के कल्याण की कामना करने से जगत् का कल्याण हो या न हो, अपना कल्याण तो अवश्य होता है ।

58. मोहाधीन आत्मा को देह, धन और कुटुंब पर अत्यधिक राग होता है जब कि मुमुक्षु आत्मा को जिनेश्वर परमात्मा, जिनमत और चतुर्विध-संघ पर अधिक राग होता है ।

59. धन को अनाज के रुप में खेत में बोने से अनेक गुणा होता है, जबकि उसी धन को जिन प्रतिमा आदि सात क्षेत्र में बोने से अनंत गुणा होता है ।

60. वसुले से कोई शरीर को छेदने पर भी क्रोध नहीं करना तथा चंदन से कोई शरीर पर विलेपन करे तो भी राग नहीं करना, यह सर्वश्रेष्ठ सामायिक हैं ।

61. इच्छा पूर्वक किया गया त्याग ही वास्तविक त्याग है ।

62. अज्ञानता के कारण पशु को धर्म समझना मुश्किल है, तो आचरण और भी कठिन है ।

63. साधु-साध्वी के लिए तो दिन में सात बार चैत्यवंदन का विधान है ही, श्रावक श्राविका के लिए भी दिन में सात बार चैत्यवंदन का विधान है ।

64. श्रावक के लिए त्रिकाल जिन पूजा का विधान है, अतः तीन बार चैत्यवंदन तो मंदिर में हो जाते है । सुबह-शाम के प्रतिक्रमण में चार बार चैत्यवंदन हो जाते हैं-इस प्रकार श्रावक के लिए भी सात बार चैत्यवंदन का विधान है ।

65. उपकारी के उपकार को याद करना, कृतज्ञता गुण है । देव-गुरु का अपनी आत्म पर असीम उपकार है, इसीलिए प्रातः उठते ही नवकार के माध्यम से उनके उपकारों को यादकर उन्हें नमस्कार किया जाता है ।

66. जन्म देनेवाले माता-पिता का प्रत्यक्ष उपकार है, जो प्रत्यक्ष उपकार को नहीं मानता हो, वह देव-गुरु के परोक्ष उपकार को कैसे मानेगा ?

67. प्रवचन श्रवण के पूर्व गुरु का विनय अर्थात् गुरुवंदन अनिवार्य है । विनय के अभाव में वह प्रवचन जीवन में नहीं उतरता है ।

68. मंदिर में गर्भ गृह में प्रवेश के पूर्व श्रावक को आठ पट से मुख कोश बांधना जरुरी है ।

69. आत्मा के विकास के चौदह गुण स्थानक है । देवता चार गुण स्थानक और तिर्यंच पांच गुणस्थानक तक चढ सकते है । एक मात्र मनुष्य ही चौदह गुण स्थानक को पार कर सकता है ।

70. देवता भौतिक समृद्धि में हमसे खूब आगे हैं, परंतु आध्यात्मिक समृद्धि में तो खूब पीछे ही हैं ।

71. जिन शासन को अपनी संतति सौपना संततिदान कहलाता है । यह दान सबसे बडा है ।

72. धन का दान सरल हैं, परंतु संतति का दान सबसे कठिन है ।

73. नवकार के स्मरण से देव और गुरु दोनों का स्मरण हो जाता है ।

74. छद्मस्थ के श्रुत ज्ञान पर रोग, बुढापा और मृत्यु तीनों से आवरण आ जाता है अर्थात् रोग के हमले से श्रुत ज्ञान भूला दिया जाता है उसी प्रकार वृद्धावस्था में भी Memory कमजोर हो जाती है । मृत्यु अर्थात् भव बदलने पर भी पूर्व का श्रुत भूल जाते है ।

75. दुष्काल के समय पशु को 3-3 दिन तक खाने-पीने को कुछ भी नहीं मिलता है फिर भी वह अट्ठम नहीं कहलाता है-उसमें सिर्फ अकाम निर्जरा ही होती है क्योंकि वह भूख-प्यास भी अनिच्छा से सहन की जाती है ।

76. माँ के गर्भ में रहकर हमने बहुत कुछ सहन किया है-परंतु जन्म के बाद हम गर्भ की उस पीडा को भूल जाते है ।

77. आज भोजन बनाने की पद्धति खूब सरल हो गई है । आज order दो और स्वामी वात्सल्य का खाना बन जाएगा-परंतु उसमें से जयणा लगभग चली गई है ।

78. अग्नि यह सबसे बडा शस्त्र है । अग्नि को जीव-भक्षी भी कहा गया है, अतः श्रावक के घर में सूर्यास्त बाद भोजन नहीं होना चाहिये ।

79. एकेन्द्रिय जीवों के प्रति भी जीव दया जैन धर्म के सिवाय कहीं नहीं मिलेगी ।

80. जैन धर्म सर्वज्ञ कथित होने से उसके वचन 100% सत्य है ।

81. श्रावक के लिए धन को बोने के लिए सात क्षेत्र हैं (1) जिनबिंब (2) जिनमंदिर (3) जिनागम (4) साधु (5) साध्वी (6) श्रावक और (7) श्राविका ।

82. तीर्थंकर की भक्ति से आत्मा तीर्थंकर नाम कर्म का बंध कर सकती है ।

83. आहार, निद्रा, भय और मैथुन की क्रिया तो पशु में भी होती है, परंतु एक मात्र धर्म ही मनुष्य को पशु से अलग करता है । धर्म से हीन मनुष्य पशु के समान है ।

84. जीवन में ज्ञान की वृद्धि के साथ नम्रता बढती चाहिये । शिक्षण के साथ यदि अभिमान बढता हो तो समझना चाहिये कि ज्ञान का पाचन नहीं हुआ है, बल्कि अजीर्ण हुआ है ।

85. अरिहंत परमात्मा की सत्य पहिचान के लिए कलिकाल सर्वज्ञ विरचित **'वीतराग-स्तोत्र'** का अध्ययन करना चाहिये और प्रभु के बताए मार्ग को समझना हो तो **'योग शास्त्र'** का अध्ययन करना चाहिये । एक में **'प्रभु'** की पहिचान है तो दूसरे में प्रभु के बताए मार्ग की पहिचान है ।

86. युगलिक काल और युगलिक क्षेत्र में भौतिक सुख सुविधाएं बहुत है परंतु धर्म का सर्वथा अभाव है, अतः वहां मोक्षमार्ग नहीं है ।

87. तीर्थंकर परमात्मा तो सभी जीवों को आत्म-तुल्य बनाना चाहते हैं परंतु बनते वे ही है, जिनमें अंतरंग योग्यता हो ।

88. जीवात्मा को आहार लेने के लिए ट्रेनिंग की आवश्यकता नहीं हैं परंतु क्या खाना और क्या न खाना ? यह सिखाने की खूब आवश्यकता रहती है ।

89. इस संसार में आत्मा एक भव से दूसरे भव में विग्रह गति से जाते समय अधिकतम तीन समय तक अणाहारी रहती हैं-इसके सिवाय सतत आहार ग्रहण करती रहती है ।

90. आज भगवान को माननेवाले बहुत है परंतु भगवान की बात को माननेवाले बहुत कम है । भगवान की आज्ञा माने बिना, भगवान को मानने का विशेष अर्थ नहीं है ।

91. संसारी जीव अनुकूल आहार की प्राप्ति, अनुकूल पत्नी व पुत्र की प्राप्ति और अमाप धन की प्राप्ति में खुश होते है, परंतु परलोक में प्रयाण समय इनमें से एक भी वस्तु जीव को सहयोग देनेवाली नहीं है ।

92. पाप करने के बाद जो सच्चे दिल से प्रायश्चित्त करता हैं, वह पाप की सजा से मुक्त हो जाता हैं, परंतु पाप करने के बाद जो पाप को अच्छा मानता हैं, वह अपने पाप और पाप की सजा को अनेकगुणा बढा देता है ।

93. पाप के पश्चात्ताप से पाप का भागाकार होता है और पाप की अनुमोदना करने से पाप का गुणाकार होता है ।

94. दूसरों के सुकृतों को देखकर उसकी दिल से अनुमोदना करनी चाहिये । उस समय हृदय में ईर्ष्या की भावना न रखें । ईर्ष्या करने से हम अपने पुण्य को जला देते हैं ।

95. मंदिर एक पवित्र स्थान हैं, अतः उसकी पवित्रता बनाए रखने के लिए अशुभ प्रवृत्तियों के साथ अशुभ विचारों का भी त्याग करना चाहियें ।

96. मंदिर में अशुभ विचार करने से हमें तो नुकसान होता ही हैं, इसके साथ मंदिर की पवित्रता को भी नुकसान होता है ।

97. मंदिर के वातावरण को पवित्र बनाए रखने के लिए वहां अशुभ धातुओं का प्रवेश भी निषिद्ध है । मंदिर में लोहे (Steel) प्लास्टिक और एल्युमिनियम आदि की वस्तुओं का उपयोग नहीं होना चाहिये ।

98. पाप तो लकडी के ढेर के समान है, जबकि पुण्य दियासलाई के समान है । पुण्य की एक ही चिनगारी पाप के ढेर को जलाकर खाक कर देती है ।

99. युद्ध के मैदान में हजारों को जीतना आसान हैं, परंतु अपने मन पर विजय प्राप्त करना कठिन है । मन को जीते बिना आत्मा कर्म के बंधन से मुक्त नहीं हो सकती है ।

100. वचन और काया को वश करना आसान है, परंतु मन को वश करना बहुत कठिन है, जिसने मन को वश कर लिया, उसने सब कुछ प्राप्त कर लिया है ।

101. सिर्फ काया को कष्ट देना तप नहीं है, तप द्वारा तो इन्द्रिय और मन को वश करना है ।

102. नवपद में किसी व्यक्ति का नाम नहीं है, ये पद तो शाश्वत पद है ।

103. जीवों के प्रति चार प्रकार की भावनाएं होनी चाहिये ।

1. मैत्री भावना : `जगत् में मेरा कोई दुश्मन नहीं है । जगत् के सभी जीव मेरे मित्र हैं ।' जीवों के हित का विचार करना ही मैत्री भावना है ।

2. प्रमोद भावना : गुणीजनों को देख हृदय में खुशी होनी चाहिये ।

3. करुणा भावना : दु:खी प्राणी को देख हृदय द्रवित हो जाना चाहिये ।

4. माध्यस्थ्य भावना : पापी व अधम आत्माओं को देख उनके प्रति रोष न कर उनकी भाव दया का चिंतन करना चाहिये । `अहो ! उनका क्या होगा ?'

104. अहिंसा तो कामधेनु गाय के समान है जो हमारी सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करती है ।

105. यश नाम कर्म के उदय से मान-सन्मान मिलता है । दूसरों को मान मिले तो ईर्ष्या न करे और स्वयं को मान मिले तो अभिमान न करे ।

106. सुकृत करने पर भी मान न मिले तो अपने पूर्व भव के पाप कर्म का उदय समझना चाहिये । सामनेवाले पर रोष करना उचित नहीं है ।

107. पुण्य का उदय हो तो सभी सुविधाएं सामने से मिलती है और पाप का उदय हो तो प्राप्त सुविधाएं भी दूर चली जाती है ।

108. जो वस्तु हमें संसार से तैरने में सहायता करे, उसे उपकरण कहते है और जो वस्तु हमें संसार में डूबाए, उसे अधिकरण कहते है ।

109. धर्म के उपकरण पर भी ममता भाव आ जाय तो वह हमारे लिए उपकरण मिटकर अधिकरण बन जाता है ।

110. साधु के तीन लक्षण है । (1) जो कष्ट को हंसते हंसते सहन करे । (2) जो दूसरों को धर्म आराधना में सहायता करे और (3) जो आत्म साधना के लिए प्रयत्नशील हो ।

111. वृक्ष जड़ के आधार पर टिका हुआ हैं, जड़ कट जाय तो वृक्ष धराशायी हो जाता है । इसी प्रकार धर्म की आधार-शिला मैत्री आदि चार भावनाएं है ।

112. M.C. व प्रसूति के बाद अशुचि के प्रवाह के कारण उन दिनों में स्त्री को बाह्य धर्म क्रियाएं करने का निषेध है ।

113. M.C. दरम्यान पुस्तक पढने से ज्ञानावरणीय कर्म का बंध होता है ।

114. स्तवन भक्ति प्रधान हैं, अतः प्रतिक्रमण में श्रावक भी बोल सकते हैं, जबकि सज्झाय में उपदेश की प्रधानता हैं, अतः साधु भगवंत की उपस्थिति में श्रावक नहीं बोलते हैं ।

115. धन से सुख की सामग्री मिल सकती है, परंतु सच्चा सुख नहीं ।

116. अकाल मृत्यु, वृद्धावस्था और आकस्मिक रोग वैराग्य के प्रबल निमित्त है । देवलोक में उनका अभाव होता है, अतः देवलोक में वैराग्य दुर्लभ है ।

117. जलती हुई चिता को देखकर भी योग्य आत्मा में वैराग्य भाव पैदा हो सकता हैं, देवलोक में चिता नहीं है, अतः वैराग्य का निमित्त नहीं है ।

118. देवलोक में रहे देवताओं को प्रभु की वाणी और अवधिज्ञान से पूर्व भव को देखने आदि से वैराग्य हो सकता है ।

119. मानव को सबसे बडी भूख मान की है । मान प्राप्ति के लिए वह बडे से बडे कष्ट भी सहन कर लेगा और कींमती धन का भी दान कर सकेगा ।

120. दुनिया सुख को अच्छा मानती हैं, परंतु प्रभु का शासन तो सुख को भयंकर कहता है । आत्मा को संसार में भटकानेवाला सुख का राग ही है । आत्मा सबसे अधिक पाप सुख को पाने के लिए करती है, अतः भौतिक सुख तो आत्मा का दुश्मन है ।

121. सच्चे सुख की प्राप्ति के लिए क्षणिक सुख का त्याग खूब जरुरी है ।

122. 'तीर्थंकर नाम कर्म' ऐसी पुण्य प्रकृति हैं, जिसका उदय संपूर्ण जगत् को लाभ करता हैं ।

123. स्त्री जीवन में दो पाप सबसे अधिक भयंकर हैं- (1) शील भंग और (2) गर्भपात। गर्भपात में पंचेन्द्रिय मनुष्य की हत्या है और शील भंग में आत्म स्वरुप की हत्या है।

124. पति-पत्नी के बीच वासनाजन्य प्रेम होता है, जबकि माँ के दिल में पुत्र के प्रति निःस्वार्थ प्रेम होता है। प्रभु विश्व की माता हैं, क्योंकि उनके दिल में जगत् के जीव मात्र के कल्याण की कामना होती है, इस कारण उनके शरीर में रहा रक्त भी दूध की भांति श्वेत होता है।

125. दिगंबर मत के अनुसार स्त्री का पंच परमेष्ठी में कहीं स्थान नहीं है, वे स्त्री का मोक्ष नहीं मानते हैं, जबकि श्वेतांबर मान्यता के अनुसार पंच-परमेष्ठी में से स्त्री दो पद प्राप्त कर सकती है। वह साध्वी बन सकती है और वह कर्म मुक्त भी बन सकती है।

126. इस अवसर्पिणी काल में सबसे पहले मोक्ष में जानेवाली स्त्री अर्थात् मरुदेवा माता है।

127. हर तीर्थंकर के शासन में तीर्थंकर परमात्मा के शिष्यों की अपेक्षा साध्वियाँ दुगुनी मोक्ष में गई है। भगवान महावीर के 14000 शिष्यों में से 700 शिष्य मोक्ष में गए, जबकि साध्वियाँ 1400 मोक्ष में गई है।

128. पालतु पशु का जीवन मनुष्य पर निर्भर है। मनुष्य उनका पालन करता है और बदले में वे बहुत कुछ देते है।

129. गाय घास खाती है और बदले में दूध देती है। कुदरत की व्यवस्था देखे, हर अनाज के साथ घास चारा पैदा होता है। अकेला धान्य कभी नहीं उनता है, उसके साथ घास चारा भी पैदा होता है।

130. गाय का गोबर खेती में खाद का काम करता है। सूखने पर ईंधन का काम करता हैं, जल जाने के बाद राख बनती हैं, जो बर्तन मांजने में काम लगती है, अनाज के संग्रह में काम लगती है। केश लूंचन में काम लगती है, जबकि आदमी की राख कुछ काम नहीं लगती है।

131. गुरु शिष्य की भूल बताए, फिर भी शिष्य के दिल में गुरु के प्रति पूर्ण अहोभाव रहे तो वह शिष्य सच्चे शिष्यत्व को प्राप्त करता है।

132. शिष्य के ह्रदय में गुरु का स्थान रहे, यह उसकी योग्यता का प्रतीक है, परंतु गुरु के ह्रदय में शिष्य का स्थान रहे तो यह उसकी महानता का प्रतीक है ।

133. गुरु के ह्रदय में बसनेवाला शिष्य कौनसी उपलब्धियों को प्राप्त नहीं करता हैं अर्थात् सब कुछ प्राप्त करता है ।

134. गर्भ में रहे बालक के जीवन पर सबसे अधिक प्रभाव माँ के जीवन का होता है । गर्भ में रहा बालक माँ के आचार-विचारों से बहुत कुछ सीख लेता है ।

135. अति उत्तम आत्मा (तीर्थंकर आदि) के गर्भ में आने पर माँ का जीवन भी बदल जाता है ।

136. अधमाधम आत्मा के गर्भ में आने पर दयालु माता भी निर्दयी बन जाती है । कोणिक के गर्भ में आने पर चेलना सती के दिल में भी पति के कलेजे का मांस खाने का दोहद पैदा हो गया था ।

137. नमस्कार महामंत्र 14 पूर्व का सार है । नवकार के 68 अक्षर 68 तीर्थ स्वरुप है ।

138. 9 का अंक अखंड अंक है । 9 को किसी भी संख्या से गुणा करे तो उसका जोड भी 9 ही आएगा ।

139. 9 के अंक की अनेक विशेषताएं है-प्रभु के 9 अंगों पर पूजा होती है, ब्रह्मचर्य रक्षण के लिए 9 वाड है ।

140. आनंदघनजी के स्तवनों में ज्ञान योग की प्रधानता है, जबकि महोपाध्याय यशोविजयजी म. के स्तवनों में भक्ति योग की प्रधानता है ।

141. जहां समर्पण की भावना होती हैं, वहां कम-ज्यादा का विचार नहीं आता है ।

142. कृष्ण महाराजा ने 18000 साधुओं को गुरुवंदन किया । इससे उन्हें तीन लाभ हुए (1) क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति (2) तीन नरक का क्षय (3) तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन ।

143. धर्म बुढापे में करने की वस्तु नहीं है, जीवन में बुढापा आएगा ही, उसकी कोई गारंटी नहीं है ।

144. आप अपना Bank Balance बता सकते हो, परंतु क्या अपने आयुष्य का Balance बता सकोगे ? नहीं ।

145. जब तक बुढापा न आए, इन्द्रियों की हानि न हो तथा जब तक शरीर में किसी प्रकार की बिमारी न आ जाय तब तक शक्य धर्म आराधना कर लेनी चाहिये ।

146. बीच मार्ग में स्थावर और जंगम तीर्थ आते हो तो उनके दर्शन करके ही आगे बढना चाहिये ।

147. प्रभु के समीप जाने से सम्यग्दर्शन की प्राप्ति और सद्गुरु के सान्निध्य से सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होती है ।

148. नाव में बैठकर हम नदी पार कर सकते हैं, उसी प्रकार संयम की नाव में बैठकर हम भव सागर पार कर सकते है ।

149. प्रार्थना सूत्र में हमारी प्रभु से सर्व प्रथम प्रार्थना 'भव निर्वेद' है अर्थात् 'इस सुखमय संसार के प्रति मुझे वैराग्य भाव पैदा हो ।'

150. प्रभु ने जो छोडा है वह हम पाना चाहते है और प्रभु ने जो पाया है, उसकी दिल में तमन्ना ही न हो तो हम प्रभु से कोसों दूर ही है ।

151. अन्तर्मन में वैराग्य भाव पैदा हो जाय तो छह खंड के साम्राज्य को छोडना भी आसान हो जाता है ।

152. सच्चा श्रावक अपने बंगले को जेल Jail के समान ही मानता है ।

153. संसार की विचित्रता है-आज जो मित्र है, कल शत्रु बन जाते है और आज जो शत्रु है, वे कल मित्र बन जाते है ।

154. अनुकूलता में लीन नहीं बनना और

प्रतिकूलता में दीन नहीं बनना,

यही धर्मी आत्मा की सही पहिचान है ।

155. सिर पर आए सफेद बाल हमें उजले कार्य करने के लिए प्रेरणा देते है, परंतु आश्चर्य है कि आज आदमी बाजार में जाकर डाइ Die कराकर अपने बाल काले कर देता है । मानो यह मानता हो कि मेरे काले काम अभी बाकी है ।

156. जिसका पुण्य बलवान है, उसका कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता है । कहा भी है-`मारनेवाले के दो हाथ तो बचानेवाले के चार हाथ ।'

157. भवितव्यता को बदलने में कोई समर्थ नहीं है, उसके आगे प्रबल पुरुषार्थ भी पंगु है ।

158. किए हुए कर्मों की सजा अवश्य भुगतनी ही पडती है ।

159. इस जन्म में जो भी अच्छे-बूरे संबंध होते हैं, उसके पीछे जन्म-जन्मांतर का ऋणानुबंध कारण है ।

160. यदि व्यक्ति का पुण्य बलवान हो तो मौत के साधन विष, अग्नि आदि भी जीवन देनेवाले बन जाते हैं और तीव्र पाप का उदय हो तो जीवन के साधन भी मौत के कारण बन जाते हैं ।

161. जहां संयोग है, वहां वियोग खडा ही है ।

162. रात्रि में जो संथारा पोरिसी पढाई जाती है, उसमें खूब सुंदर आत्मानुशासन है ।

163. परिवर्तन इस जगत् का स्वभाव है । आज जो परिस्थिति है, वे कल बदलनेवाली है ।

164. दुःख, वियोग और अपमान के आंसू निंदनीय है, वे तो हमने खूब बहाए है । करुणा, पाप के पश्चाताप और दूसरों के सुकृतों के देख अनुमोदना के आंसू नहीं बहाए हैं ।

165. पुरुष की 72 व स्त्रियों की 64 कलाओं को सीखने के बाद भी जो व्यक्ति अपने जीवन में धर्मकला को नहीं सीखता है, उसकी वे सब कलाएं व्यर्थ ही है ।

166. शिष्य की परीक्षा विनय से होती है । ह्रदय में बहुमान भाव, वचन में नम्रता और काया से नमन ये विनय के प्रतीक है ।

167. क्षुधा आदि 20 परिषह प्रतिकूल परिषह कहलाते हैं जबकि स्त्री व सत्कार परिषह अनुकूल परिषह कहलाते है । प्रतिकूल परिषहों को समता पूर्वक सहन करनेवाला भी अनुकूल परिषहों में हार जाता है ।

168. भूख का उपाय भोजन है तो हुए अपराधों का इलाज क्षमापना है ।

169. सिर्फ सत्य बोलना धर्म नहीं है, वह सत्य भी प्रिय, हितकारी व मधुर होना चाहिये ।

170. अपनी आत्मा का अधिकांश भूतकाल तिर्यंच गति में एकेन्द्रिय जाति में और उसमें भी सूक्ष्म निगोद में ही बीता है ।

171. अपनी आत्मा ने भयंकर कष्टों को अनिच्छा से सहनकर अकाम निर्जरा खूब की है ।

172. मानव शरीर गंदे से गंदा होने पर भी मुक्ति की साधना इसी देह से शक्य है ।

173. देवलोक में रहे देवताओं के शरीर में अशुचि नाम का पदार्थ नहीं होता हैं, परंतु उनका आत्मिक विकास चौथे गुण स्थानक तक ही है ।

174. महाकाय हाथी हो, चाहे बलवान सिंह हो, परंतु उन्हें भी अपने वश में करने की ताकत मनुष्य की है ।

175. अच्छे के साथ अच्छा व्यवहार करना और बूरे के साथ बूरा व्यवहार करना, यह नीति है, जबकि धर्म तो बूरा व्यवहार करनेवाले के प्रति भी अच्छा व्यवहार करने की ही प्रेरणा देता है ।

176. सत्ता के सिंहासन पर बैठना आसान है, परंतु प्रजा के दिल में बैठना कठिन है ।

177. मंथरा आज भी जीवित है, सिर्फ उसका स्वरुप बदल गया है ।

178. नायक में भीम और कांत दोनों गुण होने आवश्यक है ।

179. वृक्ष की छाया वृक्ष को छोड कभी अलग नहीं रहती, पतिव्रता नारी पति को छोड कभी अलग नही रहती । वह पति के सुख में सुखी और पति के दुःख में दुःखी होती है ।

180. कुमारपाल महाराजा के समय जैन शासन का सूर्य मध्याह्न में तप रहा था ।

181. सिद्ध भगवंतों को छोड चौदह राजलोक में रहे सभी जीवों पर मृत्यु का एक छत्री शासन है ।

182. जो जन्मे है, वे मृत्यु से बच नहीं सकते हैं । मृत्यु से बचना है तो अजन्मा बन जाना चाहिये ।

183. मृत्यु समय संलेखना द्वारा देह और कषायों का शोषण करना चाहियें ।

184. जीवन में की गई आराधना का फल समाधि मरण है ।

185. अंतिम समय में निर्यामणा कोई भी करा सकता है-चाहे छोटा हो या बडा ।

186. जन्म के समय जो पीडा होती है, उससे अनेक गुणा अधिक पीडा मृत्यु के समय होती है ।

187. केश लोच अर्थात् मृत्यु समय होनेवाली पीडा का अभ्यास ।

188. आज के विज्ञान ने cancer को मिटाने का उपाय शोध लिया, परंतु आंखों को पवित्र बनाने का eyedrop नहीं शोधा ।

189. दूसरे जीवों के जन्म में निमित्त बनना भी पाप है । इसीलिए भोजन के बाद झूठा नहीं छोडने का विधान हैं ।

190. आंख से देखा गया सब सत्य ही होता है, ऐसा नहीं है । आकाश का कोई रंग नहीं है, फिर भी हमें वह नीला दिखाई देता है ।

191. दुनियाँ में हमें कदम कदम पर अनेक व्यक्तियों पर विश्वास रखना पडता है । विश्वास के आधार पर ही हमारा जीवन चलता है, ठीक ही कहा है-

कौन कहता हैं, हम जीते है श्वास से ?

मगर सच तो है कि हम जीते है विश्वास से !

192. केवलज्ञान एक पूर्ण ज्ञान है, जिसमें आत्मा जगत् में रहे सभी पदार्थो को प्रत्यक्ष देखती है ।

193. भगवान की इच्छा थी `जगत् के सभी जीवों को भगवान बना दूँ ।' इस उत्कृष्ट इच्छा के फलस्वरुप ही प्रभु पूर्व के तीसरे भव में तीर्थंकर नाम कर्म निकाचित करते है ।

194. सभी सिद्ध परमात्मा एक समान होते है । उनके जो 15 भेद बतलाए हैं, वे उनके पूर्व भव की अवस्था की अपेक्षा से है ।

195. साधु की अपेक्षा श्रावक का ज्ञान अधिक हो सकता हैं, परंतु चारित्र तो साधु का ही ऊंचा कहलाता है ।

196. सूर्यास्त के साथ ही वातावरण में असंख्य जीव पैदा हो जाते है । रात्रि में भोजन करने से उन जीवों की हिंसा का पाप लगता हैं, अतः रात्रि भोजन वर्ज्य है ।

197. बर्फ अति ठंडा है, वह अपने पाचन तंत्र को भी खूब नुकसान पहुँचाता है ।

198. अपना बोला हुआ शब्द कुछ ही समय में चौदह राजलोक में फैल जाता है ।

199. चार पुरुषार्थ में मोक्ष पुरुषार्थ ही सर्वश्रेष्ठ है और उसे पाने का उपाय रत्नत्रयी की आराधना साधना है ।

200. जैन दर्शन 'अवतारवाद' को नहीं मानता है । 'नमुत्थुणं सूत्र' में परमात्मा का एक विशेषण है 'अपुनराविति' अर्थात् मोक्ष में जाने के बाद वे कभी पुनर्जन्म नहीं लेते है ।

201. 7 वीं नरक का उत्कृष्ट आयुष्य ३३ सागरोपम है ।

5 अनुत्तर का उत्कृष्ट आयुष्य ३३ सागरोपम है ।

202. सर्वाधिक व्यक्त वेदना 7 वीं नरक में है व भौतिक सुख सर्वार्थसिद्ध विमान में है ।

203. असंख्य वर्ष के आयुष्यवाली आत्मा अपने जीवन में चारित्र धर्म का स्वीकार नहीं कर पाती है ।

204. जन्म के कारण ही जरा व मरण अवस्था है । कर्म से मुक्त बनी आत्मा जन्म नहीं लेती है, अतः अब उसे मृत्यु की भी पीडा नही है ।

205. प्रायः करके धन के लिए हिंसा, झूठ व चोरी के पाप होते है । जो धन की इच्छा से मुक्त बनता है, इसके जीवन में पाप की निवृत्ति सहज हो जाती है ।

206. धर्म धन से नहीं, किंतु धन के त्याग से होता है ।

207. सर्वश्रेष्ठ धर्म चारित्र धर्म है उसके पालन के लिए लेश भी धन की अपेक्षा नहीं रहती है ।

208. `वीतराग स्तोत्र' में प्रभु की पहिचान है और `योग शास्त्र' में प्रभु के मार्ग की पहिचान है ।

209. कुमारपाल महाराजा वीतराग स्तोत्र के 20 व योग शास्त्र के 12 प्रकाश का स्वाध्याय करने के बाद ही मुंह में पानी डालते थे ।

210. मल शुद्धि, देह शुद्धि (स्नान) दंत-शुद्धि, वस्त्र शुद्धि, केश शुद्धि और अल्पाहार ये प्रातः कालीन शरीर के छ आवश्यक है ।

211. सामायिक, चउविसत्थो, वंदन, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग और पच्चक्खाण ये आत्मा के छ आवश्यक है ।

212. आत्मा का पूर्ण आरोग्य मोक्ष में है और उसका इलाज रत्नत्रयी की आराधना मे है ।

213. ओपरेशन हेतु डॉक्टर के पास M.D. की डिग्री जरुरी है । ड्राइविंग हेतु लाइसेंस जरुरी हैं, उसी प्रकार नवकार महामंत्र आदि का अधिकार पाने के लिए उपधान जरुरी है ।

214. कुमारपाल महाराजा ने 70 वर्ष की उम्र में संस्कृत भाषा सीखी और संस्कृत भाषा में स्तुति की रचना भी की ।

215. सब्जी बिगड जाय तो दिन बिगडता है । सीजन में व्यापार न हो तो वर्ष बिगडता है । पत्नी की पसंदगी में भूल हो जाय तो जीवन बिगडता है, परंतु देव-गुरु की परीक्षा में भूल हो जाय तो अनेक भव बिगडते है ।

216. प्रभु के जन्माभिषेक प्रसंग पर सौधर्म इन्द्र स्वयं बैल का रुप धारण कर यह बताते है कि `हे प्रभु ! मैं आपके आगे पशु जैसा हूँ ।'

217. आत्मा का शुद्ध स्वरुप ही परमात्म-तत्त्व है ।

218. पुरुष शक्तिशाली है परंतु सहनशीलता में तो स्त्री ही पुरुष से आगे है ।

219. स्त्री जीवन के सबसे भयंकर दो पाप है : (1) शीलभंग और (2) गर्भपात !

220. पुरुष मोम है तो स्त्री अग्नि है । युवावस्था में मैथुन संज्ञा स्वतः जागृत होती है ।

221. महारानी पद्मिनी ने जोहर कर अपने जीवन को समाप्त कर दिया, परंतु अपने शील को सुरक्षित रखा ।

222. 'जय वीयराय' सूत्र में 'गुरु' शब्द का तीन बाद प्रयोग हुआ है-परंतु तीनों जगह अर्थ भिन्न है ।

223. जगगुरु-परमात्मा के अर्थ में, गुरुजण पूआ-माता-पिता आदि ज्येष्ठ की पूजा । सुहगुरु जोगो-सद्गुरु का योग ।

224. प्रत्युपकार करना बहुत बडी बात है । प्रत्युपकार न कर सके तो कम से कम उपकारी के उपकार को तो रोज याद करें । उसी का नाम कृतज्ञता है ।

225. चारित्र तो बहुत बडी वस्तु है, परंतु जिसने समकित का भी दान किया है, उसके उपकार को भी हम चूका नहीं सकते है ।

226. अनंत शक्तियों के स्वामी तीर्थंकर परमात्मा को भी मोक्ष में जाने के लिए माँ की कुक्षी में आना ही पडता है ।

227. जैन धर्म के मर्म को जानना है तो स्याद्वाद के रहस्य को समझना होगा ।

228. अतिलाड प्यार से बच्चे बिगड जाते है और बच्चों के प्रति अति कठोर बनने से वे डरपोक बन जाते है ।

229. भूल किससे नहीं होती ? पुत्री से भूल हो गई हो तो माँ उसे क्षमा कर देती है और वह भूल पुत्रवधु से हो गई हो तो सास का टेंपरेचर आसमान पर चढ़ जाता है । फर्क कहां है ? दृष्टिकोण का ही तो फर्क है ।

230. जिनपूजा करनेवाले लोग ज्यादा मिलेंगे, जबकि जिनवाणी सुननेवाले कम ! वास्तव में प्रधानता जिनवाणी को देनी चाहिए, क्योंकि सही प्रकार से जिनपूजा का बोध भी जिनवाणी से ही होता है ।

231. जैन साधु धर्मलाभ का ही आशीर्वाद देते हैं । धनवान या पुत्रवान बनने का नहीं ! क्योंकि धन, पुत्र, परिवार आदि से मिलनेवाला सुख क्षणिक और अस्थायी है, जबकि धर्म से मिलनेवाला सुख शाश्वत और अक्षय है ।

232. तुम धन के मालिक तभी तक हो जब तक श्वास है । श्वास निकल जाने के साथ ही धन से तुम्हारा अधिकार समाप्त हो जाता है ।

233. इंजन आता है तो साथ में अनेक डिब्बे भी आते हैं । जीवन में धन आता है तो वह अनेक चिंताओं को भी साथ में लेकर ही आता है । धन आने के बाद उसके संरक्षण की चिंता खूब बढ़ जाती है ।

234. दुनिया कहती हैं-सुख भोग में है जबकि प्रभु का शासन कहता है, सुख भोग में नहीं किंतु त्याग में है ।

235. जिनपूजा करते समय अपनी दृष्टि प्रभु पर स्थिर होनी चाहिए तो जिनवाणी श्रवण करते समय अपनी दृष्टि गुरु पर ही होनी चाहिए ।

236. दान से भी शीलधर्म की कीमत अधिक है । करोड़ों रुपयों के दान से भी ब्रह्मचर्य का पालन बढ़ जाता है । धनवान व्यक्ति धन का दानकर धर्म कर सकता है तो गरीब शील का पालन कर उससे भी अधिक धर्म कर सकता है ।

237. यहाँ से विदाई लेंगे तब 24 घंटे साथ में रहनेवाला यह शरीर भी धोखा देनेवाला है । अंत में सिर्फ पुण्य और पाप ही साथ चलनेवाले हैं ।

238. बाह्य परिस्थितियों को बदलना आपके हाथ में नहीं है, परंतु अपनी मन:स्थिति को तो आप आसानी से बदल सकते हैं, क्योंकि वह आपके अधीन है । सुख-दु:ख का आधार परिस्थिति नहीं, मन: स्थिति है ।

239. उत्तम पुरुषों के वचन पत्थर की लकीर के समान कभी बदलनेवाले नहीं होते हैं, जबकि अधम पुरुष अभी बोले अभी बदल गए, जैसे होते हैं ।

240. रामचरितमानस में कहा है, 'बिनु सत्संग विवेक न होइ' सत्संग बिना जीवन में विवेक पैदा नहीं होता है ।

241. भोजन करना, मानव देह की प्रकृति है परंतु खिलाकर भोजन करना, इस देश की संस्कृति है ।

242. अनीति से कमाए आपके धन पर आपके पूरे परिवार का अधिकार है, परंतु अनीति के पाप की सजा तो आपको ही भुगतनी होगी ।

243. पुण्य के फल को पाने के लिए Welcome का बोर्ड लगाते है, जब कि पाप की सजा होती हो तो हम No Admission without Permission कर देते हैं ।

244. इस जीभ ने तो कितनी मिठाई खा ली, फिर भी यह मीठी नहीं हुई । घी के डिब्बे खा गई फिर भी यह चिकनी नहीं हुई । यह तो कोरी की कोरी रहती है-`मानो' इसे कुछ मिला ही नहीं !'

245. साधु आपके द्वार पर आए तो आपके भाव बढ़ जाते हैं, जबकि भिखारी आपके द्वार पर आता है तो आपका मन बिगड़ जाता है । ऐसा क्यों ? क्योंकि साधु आपको देने के लिए आते हैं और भिखारी मांगने के लिए । आप दे या न दे, साधु आपको `धर्मलाभ' दे ही देते हैं ।

246. धर्म का परोक्ष फल मोक्ष है, जब कि प्रत्यक्ष फल समाधि अर्थात् चित्त की प्रसन्नता है ।

247. साँप का जहर चढ़ा हो तो नीम के कड़वे पत्ते भी मीठे लगते हैं । बस, मोह का जहर चढ़ा हो तो संसार के सुख भी मीठे लगते हैं ।

248. मृत्यु (समाधिमृत्यु) के द्वारा ही मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकते है ।

249. तप करते करते जीवन में समता बढ़नी चाहिए । तप करने के बाद भी यदि क्रोध आता हो तो समझना चाहिए कि तप का पाचन नहीं, बल्कि अजीर्ण ही हुआ है ।

250. सत्ता की प्राप्ति होना या इन्द्र बनना दुर्लभ नहीं है, परंतु मनुष्य भव की प्राप्ति होना दुर्लभ है क्योंकि परमात्मा बनने का एक मात्र एकाधिकार मनुष्य को ही है ।

251. गाय की विष्ठा की राख भी काम लगती है परंतु मर जाने के बाद मानव देह की भी कींमत नहीं है ।

252. असंख्य जीवों की हिंसा किये बिना गृहस्थ का एक समय का भोजन नहीं बनता है ।

253. दु:ख आने पर मृत्यु की इच्छा करना और सुख मिलने पर जीवन की इच्छा करना भी पाप है ।

254. कुतिया अपने बच्चे को अपने मुँह से ही उठाती है परंतु उसे एक भी दाँत लगने नहीं देती है, जब कि वही कुतिया अपने मुँह से चूहे को पकड़ती है और उसी समय वह मौत का शिकार हो जाता है। कुतिया के दिल में अपनी संतान के प्रति स्नेह है, जबकि चूहे के प्रति द्वेष है ।

255. संपूर्ण निष्पाप जीवन जीने का उपाय जैनशासन में साधु-जीवन के सिवाय अन्यत्र कहीं नहीं है ।

256. शत्रु को मार डालने से अपने शत्रु समाप्त होनेवाले नहीं हैं। शत्रु को मिटाना हो तो अपने भीतर रही शत्रुता को मिटा दो ।

257. भारत में जब तक संतशाही थी, तब तक शांति थी। अब संतशाही मिट गई और तानाशाही आ गई है ।

258. जीवन में जब तक समय हाथ में होता है, तब तक सत्य समझ में नहीं आता है और जब सत्य समझ में आता है, तब समय हाथ में नहीं रहता है। यह कैसी दयनीयता है ।

259. जो बुद्धि दूसरों को ठगने का काम करती है, वह बुद्धि नहीं लेकिन दुर्बुद्धि ही है। जो बुद्धि सद्विचार पूर्वक होती है, वह सद्बुद्धि-सुमति कहलाती है ।

260. कामांध व्यक्ति में लज्जा नहीं होती है ।

261. अशुभ निमित्तों से मानव-मन जल्दी प्रभावित होता है। शुभ निमित्तों का असर हो या न हो, परंतु अशुभ का असर जल्दी हो जाता है ।

262. इस दुनिया में लक्ष्मीपति कम हैं, लक्ष्मीदास ज्यादा हैं। जो लक्ष्मी के पीछे भागता है, वह लक्ष्मीपति नहीं, लक्ष्मीदास ही है ।

263. वर्तमान काल में हम जो कुछ आराधना-साधना करते हैं, उसमें उपकार महावीर प्रभु और उनके शासन का ही है ।

264. पुण्योदय के बिना न तो धन की प्राप्ति होती है और न ही प्राप्त धन का दान कर सकता है ।

265. धन की प्राप्ति के लिए जो पुण्य चाहिए, उससे भी बढकर पुण्य, दान के लिए चाहिए ।

266. देश में आजादी के बाद हॉस्पीटल और कोर्ट बढ़ गए हैं । इसका एक मात्र कारण जीभ पर नियंत्रण नहीं है । खाने में नियंत्रण हो तो Hospital जाना न पड़े और बोलने में नियंत्रण हो तो Court में जाना न पड़े ।

267. सूती वस्त्रों का मूल कपास ही है और उसका रंग सफेद ही होता है । सफेद रंग शांति का प्रतीक है ।

268. संसार से विरक्ति का भाव हो तो छह खंड के साम्राज्य को भी छोड़ना आसान हो जाता है और आसक्ति हो तो एक तुच्छ वस्तु को भी छोड़ना मुश्किल हो जाता है ।

269. अज्ञानी रोते हैं, जो नहीं है, उसे पाने के लिए और ज्ञानी रोते हैं, जो है, उसे छोड़ने के लिए ।

270. आँख का अंधापन जितना नुकसान नहीं करता है, उससे भी भयंकर नुकसान काम, क्रोध और लोभ का अंधापन करता है ।

271. पंचपरमेष्ठी भगवंत भक्ति के पात्र हैं, उनको सेवक बनकर दान देना है, जब कि दीन-दुःखी को अनुकंपा से दान देने का है ।

272. भागवती दीक्षा लेनेवाला जन्म दात्री १ माता को छोडता हैं, परंतु उसके साथ ही उसे नौ माताओं की प्राप्ति हो जाती है । आठ प्रवचन माता और नौवी गुरु माता ।

273. जिसे प्रभु के प्रति प्रेम है, उसे प्रभु के परिवार के प्रति भी अवश्य प्रेम होना चाहिये । चतुर्विध संघ यह प्रभु का ही परिवार हैं, अतः प्रभु के साथ साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका के प्रति भी प्रेम भाव होना चाहिए ।

274. सद्‌गुरु दो ही आशीर्वाद देते है-धर्मलाभ और 'नित्थार पारगा होह' अर्थात् तुम्हारे जीवन में संयम धर्म की प्राप्ति हो और तुम जल्दी ही भव सागर से पार उतर जाओ ।

275. मंदिर में जाने के बाद यह भूल जाओ कि मै **'सेठ हूँ'** वहां तो प्रभु के सेवक बनकर ही जाना चाहिये ।

276. 'मनोजय' की साधना, सबसे बडी साधना है । 12 वर्ष तक कोशा वेश्या के साथ रहे स्थूलभद्र जब दीक्षा स्वीकार के बाद कोशा वेश्या के वहां आते हैं तो उनके रोम में भी विकार भाव पैदा नहीं होता है ।

277. संसार में धनवान भी सुखी नहीं, गरीब भी सुखी नहीं । गरीब तन की भूख से दुःखी हैं, उसके पास भूख है परंतु भोजन नहीं ।
धनवान धन की भूख के कारण दुःखी है । उसके पास भोजन है, परंतु पेट की भूख नहीं ! वह अधिक-अधिक धन पाने की लालसा से दुःखी है ।

278. आप लोगों को दुःख का भय लगता है, किंतु पाप को भय नहीं लगता है । दुःख से घबरानेवाला कायर है, जबकि पाप से घबरानेवाला बहादुर है ।

279. देवी-देवता चौथे गुणस्थानक को पा सकते है, जबकि श्रावक का गुणस्थानक पांचवा है । देवताओं का उत्कृष्ट आयुष्य 33 सागरोपम है, किंतु कभी भी किसी देवता की अकाल मृत्यु नहीं होती है ।

280. हम अपने जीवन में जो कुछ भी धर्म आराधना कर पाते हैं, उसमें देव-गुरु की कृपा का प्रभाव है । हम अपनी शक्ति से कुछ भी नहीं कर पाते है ।

281. धनलाभ पूर्ण आशीर्वाद नहीं है, क्योंकि धन से सुख, सिर्फ भ्रांति है, जब कि 'धर्मलाभ' पूर्ण आशीर्वाद हैं क्योंकि 'धर्म से सुख' यह शाश्वत सत्य है ।

282. अधिक धन पाकर भी आज तक कोई सुखी नहीं हुआ है । जबकि 'पूर्ण धर्म की आराधना कर आज तक अनंत आत्माओं ने पूर्ण सुख प्राप्त किया है ।'

283. जो दान नहीं देता है उसे अगले जन्म में हाथ नहीं मिलते है । पशु को चार पांव दिए, किंतु हाथ एक भी नहीं । पशु मांग नहीं सकता है, क्योंकि गत भव में दान नहीं दिया है ।

284. जो नमस्करणीय को नमस्कार नहीं करता हैं, उसे पशु बनता पडता है । पशु का मस्तक सदैव झुका रहता है, उसे जिंदगी भर झुकना ही पडता है ।

285. जो देता हैं, वह दानवीर देवता कहलाता है, जो रखता है-संग्रह करता हैं, वह राक्षस बनता है ।

286. दान देकर भोजन करने से आत्मा ऊर्ध्वगामी बनती है । नयसार ने महात्माओं को दान देकर फिर भोजन किया, तो महावीर बनने का बीज पडा । आत्मा का जन्म नहीं और आत्मा की मृत्यु नहीं । पुरानी देह के त्याग को मृत्यु कहते है और नए देह के स्वीकार को हम जन्म कहते है ।

287. जन में से जैन बनने के लिए श्रद्धा और आचरण की दो मात्रा चाहिये ।

288. एक तबेले में 500 भैंसे आराम से रह सकती है, परन्तु एक फ्लेट में पांच इंसान शांति से नहीं रह पाते हैं । पशु किसी की भूल को नोट नहीं करते है, जब कि मनुष्य दूसरों की हर भूल को बराबर याद रखता है ।

289. प्रतिक्रमण का प्राण-सब जीवों से क्षमापना है । क्षमापना यदि होती है तो वह प्रतिक्रमण सच्चा ! क्षमापना नहीं होती है तो वह प्रतिक्रमण सच्चा नहीं है ।

290. दूसरे के अपराध को भूल जाना भी बहुत बडा गुण है ।

291. परलोक में विदाई के साथ दो ही चीजें साथ में चलती है और वे है- पुण्य और पाप ! पुण्य व्यक्ति को ऊपर उठाता है और पाप व्यक्ति को नीचे गिराता है ।

292. दुनिया में आए थे-मुट्ठी बांधकर और जाएंगे मुट्ठी खोलकर ! अर्थात् खाली हाथ ही जाना है ।

293. कस्तुरी मृग सुगंध पाने के लिए इधर-उधर भटकता है, परंतु उसे पता नहीं है कि सुगंध उसके पास ही है । बस, सुख अपने भीतर ही है और हम उसे बाहर ढूँढ रहे है ।

294. रेगिस्तान की मरुभूमि में जब गर्म गर्म हवाए चलती हैं, तब दूर से मृग को जल का आभास होता है, परंतु वहां जल का नामोनिशान तक नहीं होता है । बस, संसार में संसारी जीव को जड पदार्थों में सुख का आभास होता हैं, परंतु वह `मृग-मरीचिका' एक मात्र भ्रांति ही है ।

295. दुनिया में `धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष' ये चार पुरुषार्थ कहे गए है । अर्थ और काम को बीच में रखा हैं, इसका अर्थ है । अर्थ (धन) और काम, धर्म और मोक्ष से नियंत्रित होने चाहिये ।

296. चार पुरुषार्थों में धर्म को सबसे पहले कहा है । इसका तात्पर्य है अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति भी धर्म से ही होती है ।

297. दूसरों के घर में होली सुलगाकर जो अपने घर में दीवाली मनाना चाहते है, वे भविष्य में अवश्य दुःखी होते हैं, क्योंकि कुदरत का नियम है, आप दूसरों को जो दोगे, वो ही आपको मिलने वाला है ।

298. फूलों की जिंदगी छोटी होती है और कांटों की लंबी । कितने वर्ष जिये, वह महत्त्व की वस्तु नहीं हैं, परंतु कैसे जिये-यह महत्त्व की वस्तु है ।

299. भूखे को भोजन देने से, प्यासे को पानी मिलाने से, रोगी को दवाई देने से, निर्धन को धन देने से, कपडे रहित को कपडा देने से उपकार होता है, परंतु वह उपकार अल्पकालीन है, क्योंकि उससे थोडे समय के लिए ही इन समस्याओं का हल होता है । अरिहंत परमात्मा मोक्ष मार्ग बताकर उन सभी समस्याओं का सदा के लिए अंत ला देते है, अतः उपकार महान् है ।

300. संसार में सुख नहीं है, जो है वह क्षणिक है । मोक्ष में दुःख नहीं है किन्तु शाश्वत सुख है ।

301. प्रभु पूजा दिन में तीन बार और पेट पूजा (भोजन) एक बार करने की है-आप लोगों ने उल्टा कर दिया प्रभु पूजा एक बार और पेट पूजा तीन बार ।

302. माता-पिता एक भव के उपकारी है जबकि गुरु भवो भव के उपकारी है ।

303. घी और छाछ में घी कींमती है, अतः छाछ की उपेक्षा कर भी व्यक्ति

घी का रक्षण करता है । बस, इसी प्रकार शरीर और आत्मा में आत्मा कींमती है । अतः शरीर की उपेक्षा करके भी आत्मा का रक्षण करना चाहिये ।

304. **उपवास अर्थात् आत्मा के समीप में रहने की साधना । आत्मा का पूजारी उपवासी में खुश रहेगा, जब कि शरीर का पूजारी पारणे में खुश होगा ।**

305. सब स्वाद लेकर भी जीभ कोरी की कोरी-लूखी ही रहती है ।

306. **जीभ पर नियंत्रण रखनेवाला ही वास्तविक तप कर सकता है ।**

307. आत्मा अरुपी हैं, अशरीरी है, अजन्मा है, अमर है, अजर है, अविनाशी है, पूर्ण है, आनंदमय है ।

308. **प्रभु के समक्ष ऊंचे से ऊंचे फल और ऊंचे से ऊंचे नैवेद्य रखने के हैं, जिसका उद्देश्य उनके प्रति रही हुई आसक्ति को तोडना ही है ।**

309. चंडकौशिक सर्प ने अंत समय में भयंकर वेदना को भी समता पूर्वक सहन किया तो मरकर आठवें देवलोक में देव बन गया । जो सहन करता है, उसका उत्थान है ।

310. **फूल की कींमत तभी तक है, जब तक सुगंध है । शरीर की कींमती तभी तक हैं, जब तक आत्मा है । आत्मा निकल जाने के साथ ही शरीर की कींमत फूटी कोडी हो जाती है ।**

311. शरीर बलवान नहीं हैं, आत्मा बलवान है । शरीर में से आत्मा निकलने के साथ ही शरीर एकदम कमजोर हो जाता है । नाक पर बैठी मक्खी को भी उडाने की उसकी ताकत नहीं रहती है । आश्चर्य है कि फिर भी हम आत्मा के बदले शरीर की ही ज्यादा चिंता करते है ।

312. **अपने मस्तक के जलने पर भी गजसुकुमाल मुनि ने समता रखी तो उन्हें केवलज्ञान की भेंट मिल गई ।**

313. महाव्रतों के स्वीकार में कहीं कोई छूट नहीं है । पांचों महाव्रत एक साथ में और जिंदगी भरके लिए उच्चरे जाते है, जब कि श्रावक के व्रतों में ढेर सारे विकल्प है ।

314. रबर को खींचने से बडा होता है और छोडने पर छोटा हो जाता है । बस, आत्मा का भी यही स्वभाव हैं । आत्मा अपने आत्म प्रदेशों को चौदह राजलोक में भी फैला सकती है और उन्हीं आत्म-प्रदेशों को सुई के अग्रभाग में भी रख सकती है ।

315. सुख-दुःख की अनुभूति आत्मा को ही होती है ।

316. भरत और ऐरावत क्षेत्र में उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल में 1-1 चोबीसी अर्थात् 24-24 तीर्थंकर पैदा होता है । महाविदेह में चोबीसी नहीं होती है । पांच महाविदेह में जघन्य से 20 और उत्कृष्ट से 160 तीर्थंकर होते है ।

317. एक कालचक्र में 20 कोडाकोडी सागरोपम का काल होता है । एक अवसर्पिणी में 10 कोडाकोडी सागरोपम और एक उत्सर्पिणी में 10 कोडा कोडी सागरोपम का काल होता है ।

318. भरत और ऐरावत क्षेत्र में 1 काल चक्र में 18 कोडाकोडी सागरोपम तक युगलिक काल होता है । युगलिक अर्थात् जोडा । एक बालक और एक बालिका युगलिक काल में न लग्न व्यवस्था होती है, न ही राज्य-व्यवस्था ।

319. प्रभु महावीर के निर्वाण के 3 वर्ष 8½ मास बाद पांचवा आरा चालू हुआ । जो 21000 वर्ष तक चलेगा ।

320. जैनों का नया वर्ष कार्तिक सुद-1 से प्रारंभ होता है । जनवरी से नया वर्ष क्रिश्चियन लोगो का है ।

321. एक मास में 12 पर्व तिथियाँ आती है । प्रत्येक पक्ष (शुक्ल व कृष्ण) में हर तीसरे दिन पर्व तिथि आती है । पर्व तिथि के दिन आगामी भव के आयुष्य बंध की संभावना रहती है, अतः पर्व तिथि के दिन ज्यादा से ज्यादा त्याग करना चाहिये ।

322. आत्मा यदि मृत्यु के समय में शुभ भाव में रहे तो सद्गति निश्चित है और अशुभभाव में रहे तो दुर्गति निश्चित है ।

323. ड्राइवर की एक क्षण की भूल अनेकों के लिए मौत का कारण बन जाती

है । जीवन में थोडा सा भी प्रभाद आत्मा के लिए भयंकर दुर्गति का कारण बन जाता है ।

324. इतिहास इस बात का साक्षी है कि पहले एक सफेद बाल आने पर व्यक्ति सावधान हो जाता था और आज सभी बाल सफेद हो जाय तो भी उन्हे डाई कराकर काले कर देता है ।

325. श्रावक के लिए धन का निषेध नहीं हैं किन्तु धन की मर्यादा (limit) है ।

326. जिस प्रकार आकाश की कोई सीमा boundary नहीं हैं, उसी प्रकार इच्छाओं का भी कहीं अंत नहीं है । इच्छाएं आकाश की तरह अनंत है ।

327. दीक्षा ग्रहण करते समय जीवन पर्यंत के लिए सामायिक की प्रतिज्ञा ली जाती हैं, जब कि बडी दीक्षा के समय पांच महाव्रतों की प्रतिज्ञा होती है ।

328. सामायिक और पौषध लेने के बाद आप साधु जैसे बन जाते हैं, अतः उनमें प्रभु की द्रव्य पूजा का निषेध हैं, सिर्फ भाव पूजा कर सकते है ।

329. सम्यग्दृष्टि देवी-देवताओं की प्रतिमा को श्रावक प्रणाम कर सकता हैं, परंतु पंचांग प्रणिपात खमासमणा नहीं दे सकता है ।

330. माता-पिता की जिंदगी भर सेवा करनेवाला भी माता-पिता के उपकार के ऋण में से मुक्त नहीं हो सकता हैं, परंतु उन्हें धर्म-मार्ग में जोडनेवाला अवश्य ही ऋण मुक्त हो सकता है ।

331. पत्थर में से भगवान की मूर्ति बनाना आसान हैं, परंतु एक आदमी को सही इंसान बनाना मुश्किल है ।

332. स्त्री का सबसे बडा आभूषण शील है । शील यदि सुरक्षित है तो सब कुछ सुरक्षित हैं और शील ही चला गया तो सब कुछ चला गया ।

333. देह और आत्मा में आत्मा अधिक कींमती है, परंतु आश्चर्य है कि हम आत्मा की उपेक्षा कर रहे है और देह के पालन-पोषण और संवर्धन में रात-दिन महेनत कर रहे है ।

334. देह के साथ रहते हुए भी देह से अलग रहना अर्थात् देह पर लेश भी ममत्व भाव धारण नहीं करना, यही सबसे बडी साधना है ।

335. धनी भी दु:खी है, निर्धन भी दु:खी हैं परंतु जो त्यागी हैं वे सुखी है। साधु के पास धन नहीं, पुत्र-परिवार नहीं, पत्नी नहीं, जमीन नहीं, जायदाद नहीं, दुकान नहीं, मकान नहीं, फिर भी वे सुखी ! कारण ? उन्होंने इन सबका स्वेच्छा पूर्वक त्याग किया है।

336. माता-पिता ने अपनी संतान को कितना धन दिया, यह महत्त्व की वस्तु नहीं हैं, किंतु अपनी संतान को संस्कार कितने दिए ? यह महत्त्व की वस्तु है।

337. संसारी जीव पांच इन्द्रियों के अनुकुल विषयों को सुख कहते हैं, जबकि ज्ञानी पुरुष उन्हे सुखाभास या दु:ख ही कहते हैं।

338. अनुकूलताओं का त्याग करनेवाला और प्रतिकूलताओं को हंसते मुंह सहन करनेवाला ही सच्चा धर्मी है।

स्वयं के प्रति वज्र से भी अधिक कठोर और दूसरों जीवों के प्रति फूल से भी अधिक कोमल रहनेवाला ही सच्चा धर्मी हो सकता है।

339. जिससे शरीर कृश किंतु आत्मा पुष्ट बनती है, उसका नाम तप है।

340. जिस प्रकार सुख-दु:ख का अनुभव किया जा सकता है, परंतु उसे बताया नहीं जा सकता, उसी प्रकार आत्मा का अनुभव कर सकते हैं, उसे बताया या दिखाया नहीं जा सकता।

341. आंखों को तेजस्वी बनाने का Eye drop विज्ञान के पास हैं, किंतु आंखों को पवित्र बनाने का Eye drop विज्ञान के पास नहीं हैं, वह तो धर्म के पास ही है।

342. मृत्यु के साथ ही देह के संबंध समाप्त हो जाते है परंतु आत्मा के संबंध तो भवोभव तक साथ देते है। देव और गुरु आत्मा के संबंधी है।

343. धर्म की प्रवृत्ति करते करते संसार के विचार आ जाते हैं, परंतु संसार की प्रवृत्ति करते करते धर्म याद नहीं आता हैं-इससे पता चलता है कि अपने मन का आकर्षण किस ओर है।

344. शक्कर और नमक की परख तो एक चींटी भी कर लेती है। संसार की प्रवृत्तियों में अपनी बुद्धि कितनी ही तेज क्यों न हो, उसकी क्या कींमत

है ? सच में अपनी बुद्धि का प्रयोग आत्मा के विकास के लिए होना चाहिये ।

345. सन्मार्ग को भूले हुए को सन्मार्ग की राह बताना सबसे बडा उपकार है ।

346. दु:ख का कारण पाप हैं, अत: जब तक पाप का नाश नहीं होगा, तब तक दु:ख का नाश कैसे संभव होगा । दु:ख से बचना है तो पहले पाप से बचना होगा । काया से धर्म कर लेना आसान है, परंतु मन को धर्म में जोडना सबसे कठिन है ।

347. महासतियों के जीवन की सबसे बडी विशेषता यही थी कि उन्होंने सिर्फ काया से नही, मन से भी शील धर्म का पालन किया था ।

348. धन से दूध-घी मिलता है और शराब भी ! धन से क्या खरीदना यह आपको सोचना हैं । बस, इसी प्रकार से धर्म से सब कुछ मिलता हैं, धन भी मिलता हैं, काम भी मिलता है और मोक्ष भी मिलता है । धर्म से क्या मांगना ? यह आपके ऊपर निर्भर है ।

349. समझदार व्यक्ति दुनिया में हर वस्तु असली चाहता है-असली सोना, असली घी, असली दूध । परंतु आश्चर्य हैं कि उसे सुख नकली चाहिये । नकली सुख पाकर भी वह ज्यादा खुश हो जाता है ।

350. प्रवचन श्रवण के पूर्व गुरुवंदन जरुरी है । गुरु वंदन विनय का प्रतीक है ।

351. विनय पूर्वक जो ज्ञान प्राप्त करते हैं, वह ज्ञान आत्मा को लाभ करता है । विनय रहित विद्या आत्मा को लाभ नहीं, नुकसान करती है ।

352. धर्म खूब दयालु है । वह इस लोक का सुख देता है, परलोक का भी सुख देता है और परमलोक-मोक्ष का भी सुख देता है ।

353. हत्या करना पाप है तो आत्म हत्या करना महापाप है । जब तक छद्मस्थ अवस्था है, तब तक भूल की संभावना है ।

354. अनुपमादेवी के पास रुप नहीं था, परंतु गुण थे । कई जीवों को रुप का आकर्षण होता हैं, जब कि धर्मी आत्मा को गुणों का आकर्षण होता हैं ।

355. धर्म की आराधना के लिए पांच इन्द्रियों की परिपूर्णता चाहिये और

अनुकूल परिवार भी चाहिये । इन दोनों की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ नहीं, बल्कि पुण्य ही चाहिये ।

356. विवाह के बाद कन्या का घर बदल जाता है । पति का घर उसका घर बन जाता है । पतिव्रता नारी पति के सुख में सुखी और पति के दुःख में दुःखी होती है ।

357. धर्म का एक अर्थ हैं स्वभाव ! पानी का धर्म शीतलता है, अग्नि का धर्म उष्णता है । आत्मा का धर्म ज्ञान, दर्शन और चारित्र है, अतः ज्ञान, दर्शन और चारित्र प्राप्त करानेवाली क्रियाओं को भी हम उपचार से धर्म कहते है ।

358. आत्मा का स्वभाव में रमण करना, भाव चारित्र है । उस चारित्र को प्राप्त कराने में साधन भूत साधु जीवन की क्रियाएं द्रव्य चारित्र है ।

359. कोई व्यक्ति अच्छा काम करता है, फिर भी उसे यश नहीं मिलता है, उसका कारण पूर्व भव में बंधे हुए अपयश नाम कर्म का उदय है ।

360. जीवन में धन की प्राप्ति न श्रम से होती है, न बुद्धि से बल्कि पुण्य के उदय से अर्थात् लाभांतराय कर्म के क्षयोपशम से होती है ।

361. संसार अर्थात् जहां अनंत दुःख है और सुख का नामो निशान नहीं है ।

362. मोक्ष का एक नाम अपवर्ग भी है अर्थात् मोक्ष में पाप, फांसी, बंधन, भय और मरण नहीं है ।

363. भरत महाराजा को आरिसा भवन में केवलज्ञान हुआ परंतु इन्द्र ने आकर पहले साधु वेष अर्पण किया, फिर वंदन किया । क्योंकि प्रभु का शासन व्यवहार मार्ग से ही चलता है ।

364. प्रभु की आज्ञा ही धर्म है । आज्ञा के पालन में पूर्ण धर्म समाया हुआ है । संपूर्ण आज्ञा का पालन शक्य न हो तो यथा शक्य आज्ञा का पालन करना चाहिये और जिसका पालन शक्य न हो उसके लिए 'भावना' करनी चाहिये ।

365. भोगावली कर्म बाकी हो तो चरम शरीरी आत्मा को भी संसार के सुख भोगने पडते है । श्रेणिक पुत्र नंदिषेण मुनि ने दीक्षा ली थी परंतु भोगावली कर्म बाकी थे तो उन्हें पुनः संसार में आना पडा ।

366. सिर्फ भगवान मिल जाने से आत्मा का कल्याण नहीं हो जाता है भगवान के समवसरण में तो अभव्य आत्मा भी आ जाती हैं परंतु जो भगवान की आज्ञा मानता हैं, उसी का कल्याण हो सकता है ।

367. मोक्ष के अभिलाषी को संयम कष्टप्रद नहीं लगता है, क्योंकि उसकी नजर परिणाम की ओर है । व्यापारी की नजर मुनाफे की ओर है तो उसे व्यापार के कष्ट, कष्ट रुप नहीं लगते हैं ।

368. शुभ विचार आ जाय तो शुभ कार्य में कभी विलंब नहीं करना चाहिये और अशुभ विचार आ जाय तो कालक्षेप (Timepass) करना चाहिये ।

369. माता-पिता की सच्ची संतान वो ही हैं, जो उनकी आज्ञा का पालन करे । प्रभु का सच्चा भक्त वो ही हैं जो प्रभु की आज्ञा का पालन करे ।

370. बाह्य तप से शरीर प्रभावित होता है । बाह्य-तप बाहर से दिखता है, जबकि अभ्यंतर तप का संबंध मन से हैं, वह दिखता नहीं है । अभ्यंतर तप करनेवाले को कोई `तपस्वी' नहीं कहता है । परंतु ज्ञानियों की नजर में बाह्य तप से भी ज्यादा कींमत अभ्यंतर तप की है ।

371. अपनी भूल को सुधारना हो तो भूल हो जाने के बाद उसका अवश्य प्रायश्चित्त करना चाहिये ।

372. अपने पाप या तो ज्ञानी जानते हैं या अपनी आत्मा खुद जानती है । पाप को छिपाने से पाप बढता जाता है और प्रकट करने से घटता जाता है ।

373. सूर्यास्त के बाद आंखों से देखे न जा सके ऐसे असंख्य जीवाणु वातावरण में पैदा हो जाते हैं, अतः उन जीवों की रक्षा के लिए रात्रि भोजन का निषेध है ।

374. ईर्ष्या की आग भीतर से जलाती है, खोखला करती है । ईर्ष्यालु व्यक्ति दूसरे के उत्कर्ष को कभी सहन नहीं कर पाता हैं ।

375. रसोई बनाने में हिंसा है, परंतु वहां यतना धर्म का पालन हो तो वह धर्म है ।

376. लाभांतराय कर्म के उदय के कारण ऋषभदेव प्रभु को भी 400 दिन तक निर्दोष भिक्षा नहीं मिली ।

377. प्राप्त सामग्री में असंतोष और अप्राप्त की लालसा ही मनुष्य को दुःखी करती है। जो मिला है, उसमें संतोष धारण करे और अधिक पाने का लोभ न करे, वह व्यक्ति हर संयोगों में हर परिस्थिति में खुश रह सकता है।

378. सिर्फ वर्तमान का ही विचार करना पशुता है, जबकि भविष्य का विचार करना बुद्धिमत्ता है।

379. आहार से सिर्फ शरीर ही नहीं बनता हैं, आहार का प्रभाव अपने मन पर भी पड़ता है।

380. गधा भी तंबाकु को नहीं खाता हैं परंतु मनुष्य पैसे खर्चकर भी उसे बडे चाव से खाता है। क्या कहना उसे !

381. पांच महाव्रतों में चौथा महाव्रत सबसे अधिक कींमती हैं, अतः उस व्रत के पालन और रक्षण के लिए सबसे ज्यादा सावधानी जरुरी है।

382. टी.वी. का दूसरा नाम है दूर-दर्शन। अर्थात् जो प्रभु के दर्शन से हमेशा दूर रखता है और गुरु के निकट आने नहीं देता है।

383. जीभ के दो काम हैं वाद और स्वाद। दोनों पर नियंत्रण न हो तो भारी अनर्थ होता है।

384. सचित्त वस्तु में जीव हिंसा तो है ही, उसके साथ ही वे वस्तुएं कामवर्धक भी है।

385. अज्ञान एक अंधकार है, उस अंधेरे को गुरु भगवंत दूर करते है।

386. एक बार पृथ्वी को पूछा गया कि तेरे ऊपर बडे बडे पर्वत, बिल्डिंग आदि है उनका भार तुम्हें नहीं लगता ? तब पृथ्वी ने कहा, ``उनका भार मुझे नहीं लगता लेकिन दो व्यक्तिओं का मुझे बहुत भार लगता है (1) कृतघ्नी और (2) विश्वासघाती का।

387. हर व्यक्ति को अपने माता-पिता के उपकार को नहीं भूलकर उनकी सेवा द्वारा उनके आशीर्वाद प्राप्त करने चाहिये।

388. आम के वृक्ष पर जब फल लगते है तो डालियाँ झुक कर नीचे आ जाती है, उसी तरह जीवन में कितना भी ज्ञान प्राप्त कर ले फिर भी नम्र बनना चाहिए।

389. पहले इन्सान बनो फिर डॉक्टर-वकील बनो, यह अपना कर्तव्य है । जीवन में इंसानियत पाए बिना जो डॉक्टर-वकील बनेगा, वह समाज सेवी नहीं, समाज-शोषक ही बनेगा ।

390. प्रभु के समवसरण में अभव्य आत्मा का आगमन हो सकता हैं, परंतु अभव्य आत्मा शत्रुंजय के दर्शन भी नहीं कर पाती है । आप और हम बडभागी है कि हमें गिरिराज की स्पर्शना का सुअवसर प्राप्त हुआ है ।

391. श्रावक के 11 वार्षिक कर्तव्यों में तीसरा कर्त्तव्य यात्रात्रिक है । प्रत्येक श्रावक को वर्ष में एक बार छह नियमों के पालन पूर्वक किसी तीर्थ की यात्रा अवश्य करनी ही चाहिये ।

392. संयम जीवन के पूर्वाभ्यास की Training लिए उपधान तप एवं छ'री पालक संघ का खूब महत्त्व है । साधु जीवन की भांति इस संघ में पाद-विहार, एकासना तथा उभयकाल प्रतिक्रमण की ट्रेनिंग मिलती है ।

393. राजस्थानी जैन समाज दान और तप में आगे है । परंतु दो वस्तुओं में पीछे हैं-ज्ञान और चारित्र (संयम) में ।

394. हाथों की शोभा कंकण नहीं किंतु दान है ।

395. आज से 500 वर्ष पूर्व खंभात के ऋषभदास ने एक गुजराती काव्य `शिक्षारस' रचा है, जिसमें उन्होंने भोजन संबंधी 50 सूचनाएं दी है । उसमें पहली सूचना है-`दान देकर फिर भोजन करना चाहिये ।'

396. कलियुग की बलिहारी है-`जिन माँ-बाप ने बच्चे को बोलना सिखाया, वो ही बच्चा बडा होकर माँ-बाप को चूप रहना सिखाता है और जिन माँ-बाप ने बच्चे को चलना सिखाया। वे ही माँ-बाप को `बैठना' सिखाते हैं ।

397. जीवन में शांति, मरण में समाधि, परलोक में सद्गति और परंपरा से मुक्ति पाने के लिए पार्श्वनाथ प्रभु की पोषदशमी की आराधना करनी चाहिये ।

398. पार्श्वनाथ प्रभु ने मरुभूति के भव में सम्यक्त्व की प्राप्ति करने के बाद हाथी के भव से उत्तरोत्तर मरणांत कष्टों को समतापूर्वक सहन किया है, अतः उनकी आराधना करने से जीवन में दुःख को सहन करने का बल प्राप्त होता है ।

399. सूर्य का अस्तित्व भोजन को पचाने में सहायक बनता हैं, दिन में भोजन सहज पच जाता है । रात्रि में भोजन, प्रकृति-विरुद्ध आहार है ।

400. आयुर्वेद का सूत्र हैं-`पेट को रखो नर्म, पांव को रखो गर्म और सिर को रखो ठंडा, फिर डॉक्टर आए तो उसको मारो डंडा ।' इसका रहस्य हैं-`जो भूख से कम खाता हैं अर्थात् उनोदरी करता हैं, पांव से श्रम करता है और दिमाग को शांत रखता हैं, उसे कभी डॉक्टर की शरण में जाना नहीं पडता है ।

401. आयंबिल का तप ब्रह्मचर्य में सहायक हैं, क्योंकि वह सात्त्विक आहार है । हिंसक अर्थात् तापसी आहार व्यक्ति को क्रोधी क्रूर बनाता है । स्वादिष्ट Testful अर्थात् राजसी आहार व्यक्ति को कामी बनाता है ।

402. जिसका आहार सरस होगा, उसका भजन निरस होगा । जिसका आहार निरस होगा, उसका भजन सरस होगा ।

403. जैनों के मुख्य तीर्थ पर्वत पर अथवा जंगल में आए हुए है । शत्रुंजय-गिरनार-हस्तगिरि-कदंबगिरि-सम्मेतशिखर आदि तीर्थ पर्वत पर है । राता महावीरजी, मुछाला महावीरजी राणकपूर आदि तीर्थ जंगल में है ।

पर्वत पर प्रभु के दर्शन कष्ट उठाने के बाद होते है । कष्ट उठाने के बाद जिसकी प्राप्ति होती हैं, उसका आनंद कुछ और होता है ।

जंगल में भौतिक सुख-सुविधाएं नहीं होती हैं, अतः प्रभु के साथ सरलता से संबंध जुडता है ।

404. एक ह्रदय में राम और काम दोनों की प्रतिष्ठा एक साथ नहीं हो सकती है । अतः राम (प्रभु) से संबंध जोडना हो तो काम से संबंध तोडना पडेगा और काम से संबंध जोडना हो तो राम से संबंध तोडना पडेगा । तीर्थ यात्रा प्रभु के साथ संबंध जोडने के लिए और संसार के साथ संबंध तोडने के लिए है ।

405. सचित्त वस्तु कामवर्धक हैं, इसीलिए जैन आहार में कच्चे सचित्त वस्तु खाने का निषेध किया है ।

406. आज सर्वत्र दान धर्म बढ रहा हैं, परंतु शीलधर्म घट रहा है । तप धर्म बढ रहा है, परंतु भावधर्म घट रहा है ।

दान से भी शील धर्म की कींमत ज्यादा है । सोने के मंदिर बनाओ और रत्नों की प्रतिमा भराओ । उससे भी ज्यादा लाभ ब्रह्मचर्यव्रत के पालन में है ।

407. **जिसने गृहस्थ जीवन में रहकर आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत का स्वीकार किया है । उसने अपने आधे संसार को पार कर दिया है ।**

408. प्रभु की आरती के साथ हम कुमारपाल महाराजा को याद करते है । रोज बोलते हैं-आरती उतारी राजा कुमारपाले' आरती तो आप भी उतारते हो, परंतु कुमारपाल की भावना कुछ और ही थी ।

409. **मानव जन्म महान है क्योंकि इसी जीवन से आत्मा, परमात्मा बन सकती है ।**

410. परमात्मा बनने की सबसे पहली सीढी सच्चा इंसान बनना है । इंसान बनने के लिए `कृतज्ञता' गुण जरुरी है ।

कृतज्ञता अर्थात् उपकारी के उपकार को सदैव याद रखना ।

इस जीवन में सबसे पहला उपकार माँ का हैं, परंतु दुर्भाग्य है कि आज मानवी `माँ' के उपकार को ही भूल गया है ।

411. **पशु योनि में भी माँ का संबंध तो होता हैं, परंतु वह मर्यादित समय तक ही । जैसे ही बच्चा स्तनपान करना छोड देता हैं, उसके साथ ही माँ का संबंध पूरा हो जाता है । जब कि मानव के लिए यह संबंध जिंदगी भर के लिए है ।**

412. बालक के विकास की जवाबदारी माँ लेती है और जब माँ वृद्ध हो जाती हैं, तब उसकी जवाबदारी बेटा लेता है । पूरक बनकर संबंध निभाते हैं, तभी जीवन सुखमय बनता है ।

413. **माँ या बेटा, दोनों अथवा दोनों में से एक ज्योंही अपने कर्तव्य से चूक जाते हैं, त्योंही जीवन अंधकारमय बन जाता है ।**

माँ सिर्फ बालक को जन्म ही नहीं देती है, परंतु जीवन भी देती हैं, सच्ची माँ तो बालक को सुसंस्कार भी देती है । वे माताएँ भी अपने कर्तव्य को चूक रही हैं, जो बालक के जन्म के पूर्व ही उसे गर्भपात कराकर परलोक पहुँचा देती है अथवा जन्म और जीवन देने में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेती है ।

414. संतान को जन्म देना और देह का पालन करने का काम तो गाय और कुतिया भी कर देती है, परंतु वास्तविक जवाबदारी तो संतान को संस्कारित करने की है-यदि संतान को संस्कारित नहीं किया तो वह संतान आगे चलकर अपने वृद्ध माता-पिता को वृद्धाश्रम में ही भेजेंगे !

415. जो इंसान अपनी जन्मदात्री माँ और पालक पिता के उपकार को भूल जाता है, कुदरत उसे कभी माफ नहीं करती है ।

416. माँ-बाप की बदौलत ही तुम इस दुनिया को देख सके हो तो उनके उपकार को सदैव दृष्टि पथ पर रखों । प्रातः काल में उठने के बाद प्रभु के नाम के स्मरण के बाद माता-पिता के चरणों में अवश्य प्रणाम करो ।

417. बचपन में माँ के कारण बालक का विकास हैं तो युवावस्था में गुरु माता से ही जीवन का विकास है । युवावस्था में जिसके सिर पर गुरु नहीं, वह यौवन के वन में कहीं भटक जाता है ।

418. वन (जंगल) को पार करने में मार्गदर्शक (Guide) की अपेक्षा रहती है, उसी प्रकार यौवन को निष्कलंक-बेदाग प्रसारित करने में सद्‌गुरु की अपेक्षा रहती है ।

युवावस्था में बल व बुद्धि दोनों बढते है, उन्हे अंकुश में रखने का काम गुरु ही करते है ।

419. नदी के जल को बांध द्वारा रोका जाय तो वह जल सिंचाई के काम लगता है और वही जल बाढ के रुप में बहने लगे तो भयंकर विनाश ही करता है ।

मानवीय बल-बुद्धि पर जब सद्‌गुरु का अंकुश रहता हैं तो जीवन विकास की ओर आगे बढता है और किसी प्रकार का अंकुश न हो तो मानवी पतन के मार्ग पर ही आगे बढता है ।

420. जिस माँ ने बोलना सिखाया, उसी माँ को जब बेटा धिक्कारता है, अपमानित करता हैं, तब माँ का कलेजा टूट जाता है । जो माँ की हाय लेता है, वह संतान कभी सुखी नहीं हो सकती ।

421. सद्‌गुरु हमें जीवन की सही दिशा बताते है । सिर्फ चलने में गति अवश्य हैं, जबकि सोच-समझकर चलने में प्रगति है ।

422. सिर्फ जिंदगी जीना पर्याप्त नहीं है, परंतु सही जिंदगी जीना खूब महत्त्वपूर्ण है ।

423. जिंदगी की सही राह पाने के लिए सद्‌गुरु की उपासना खूब जरुरी है ।

424. बचपन को संस्कारित करने का काम माँ करती हैं तो युवावस्था को संस्कारित करने का काम सद्‌गुरु करते है ।

425. आधुनिक शिक्षण परीक्षालक्षी हो गया है ।

पढते क्यों हो ? तो बच्चो का एक ही जवाब है-`परीक्षा में पास होना है ।'

जबकि शिक्षण का उद्देश्य तो जिंदगी की परीक्षा में पास होना, को होना चाहिये ।

426. जीवन की परीक्षा में पास होने के लिए सुसंस्कार अनिवार्य है ।

शिक्षा (Education) से भी संस्कार का महत्त्व अधिक है । शिक्षण के बाद यदि संस्कार न हो तो वह शिक्षण भी लाभ के बदले नुकसान ही करता है ।

427. जन्म से कोई महान् या अधम नहीं बनता हैं, मनुष्य को महान् और अधम बनानेवाला उसका कर्म ही है ।

428. मनुष्य का आचरण उसके विचारों के अनुसार बनता है । अच्छी संगति से जीवन संस्कारी बनता है और दुर्जन की संगति से जीवन खराब बनता है ।

429. गटर का गंदा पानी भी गंगा के संसर्ग से पवित्र बन जाता है और गंगा का पवित्र जल भी सागर की संगति से खारा हो जाता है । मानवीय मन भी संगति से अत्यधिक प्रभावित होता है ।

430. जीवन में जितने भी बुरे कर्म हैं, वे जवानी में ही होते है अतः जवानी पर अंकुश जरुरी है ।

431. भूल दो प्रकार से होती हैं-अज्ञानता और मोह से । बालक भूल करता है नासमझी के कारण और जवान भूल करता है मोह के कारण ।

धन और वासना का गुलाम व्यक्ति कोई भी गलत कार्य कर सकता है ।

432. सामान्यतया इस जीवन में की गई गलतियों की सजा हमें होती है और कभी कभार इस जीवन में निर्दोष होने पर भी पूर्व जन्म के बुरे कर्मों की सजा भी इस जीवन में भुगतनी पडती है ।

433. यदि गलती की है और सजा हुई हैं तो उस सजा को सहर्ष स्वीकार करे और भविष्य में पुनः भूल न हो, इसके लिए सावधान रहे ।

434. शराब का नशा कुछ घंटों तक भान भुलाता है, जबकि जवानी का नशा 20-25 वर्ष तक भान भुलाता हैं, अतः जवानी का नशा न चढे, उसके लिए खूब सावधानी चाहिये ।

435. भूल हो जाना, मानव-स्वभाव हैं, परंतु भूल का स्वीकार न करना, सबसे बडा अपराध है ।

436. जो कभी भूल न करे, उसे भगवान कहते हैं । जो भूल के बाद सुधर जाय, उसे इंसान कहते है ।

437. अपनी गल्ती को सुधारने के लिए आपको एक अवसर (Chance) हैं अतः प्रभु के आगे अपनी भूलों के बदले तीव्र पश्चात्ताप करे ।

भूल हो जाने के बाद जो हृदय से पश्चात्ताप करता हैं, वह भविष्य में पुनः भूल नहीं करता है ।

438. प्रभु की ओर जो एक कदम चलता हैं, प्रभु उसके सामने नौ कदम चलते है ।

439. भीतर जब क्रोध की आग पैदा होती हैं तो वह हमसे कई गलत काम करा देती हैं, अतः क्रोध की आग को क्षमा के जल से शांत करने का प्रयत्न करना चाहिये ।

440. अंतरंग योग्यता और पात्रता हो तो भयंकर पापी का भी उद्धार करने के लिए भगवान सामने से चले आते हैं । चंडकौशिक सर्प क्रूर था-हिंसक था-परंतु उसमें अंतरंग योग्यता थी, तो महावीर प्रभु स्वयं उसे तारने के लिए आए ।

441. शरीर अस्वस्थ लगे तो उसे स्वस्थ बनाने के लिए डॉक्टर के पास जाते हैं, उसी प्रकार जिसे अपनी आत्मा कर्म के रोग से अस्वस्थ लगती है, वही आत्मा अपने कर्मरोग को मिटाने के लिए सद्‌गुरु रुपी डॉक्टर के पास जाता है ।

442. धर्म की प्रवृत्ति बढ़ाने के साथ पाप की प्रवृत्ति भी बंद करनी चाहिए ! एक ओर प्रभुपूजा कर प्रभु का संपर्क करे और दूसरी ओर T.V. द्वारा अश्लील दृश्य भी देखे ! यह दोहरी नीति बंद नहीं होगी, तब तक उद्धार कैसे संभव है ?

443. पाप को प्रकट करना चाहिए-उसके बदले उसे छिपाने की कोशिश करते हैं और पुण्य को छिपाना चाहिए-इसके बदले उसका ढोल पीटा जाता है ।

444. घर में चींटी को नहीं मारनेवाली स्त्री अस्पताल Hospital में जाकर गर्भ में रहे हुए संतान की हत्या करा देती है, तो उसे जैन कैसे कहा जाय ?

445. सन्मति के अभाव में संपत्ति खतरनाक है ।

446. अज्ञानी जीवों को रुप का आकर्षण होता है, जबकि ज्ञानी को गुणों का आकर्षण होता है ।

447. उपदेश सभी को दिया जाता है, परंतु अपनी-अपनी पात्रता के अनुसार ही व्यक्ति उसे ग्रहण करता है । नदी में पानी भरपूर है, परंतु जिसके पास जितना बड़ा पात्र होगा, उसी के अनुसार उसे पानी मिलनेवाला है ।

448. सुख के क्षण जल्दी बीत जाते हैं, जब कि दुःख में समय लंबा लगता है ।

449. पुण्य के उदय से प्राप्त भौतिक सुख सामग्री का भोग करना भी पाप ही है ।

450. अयोग्य व्यक्ति को प्राप्त हुए अधिकार, उसी व्यक्ति को भयंकर नुकसान पहुँचाते हैं ।

451. आग, हवा और पानी नियंत्रण में हो, तो जीवन जीने के साधन हैं, अन्यथा वे ही मौत के दूत हैं ।

452. परमात्मा तो तारने के लिए बैठे हैं, परंतु हमारी अपात्रता के कारण ही हमारा कल्याण नहीं हो पाया है ।

453. पारसमणि के स्पर्श से लोहा सुवर्ण हो जाता है तो फिर प्रभुके स्पर्श-संग से अपनी आत्मा परमात्मा क्यों न बने !

454. प्रभु के चरणों में तन, वचन और धन का समर्पण आसान है, परंतु मन का समर्पण सबसे अधिक कठिन है ।

455. सिर्फ देना वह दान नहीं है, परंतु भावपूर्वक दान किया जाता है, वही दान मुक्ति का कारण बनता है ।

456. मान करना पाप है, परंतु सन्मान का दान करना सबसे बड़ा धर्म है । पुण्यबंध के 9 प्रकार हैं, उनमें सर्वाधिक पुण्य नमस्कार के दान से होता है ।

457. पुण्य बंध की प्रवृत्ति कर हम सुख को आमंत्रण देते हैं और पाप की प्रवृत्ति कर हम दुःख को आमंत्रण देते हैं । जीवन में सुख-दुःख भी बिना आमंत्रण नहीं आते हैं ।

458. अमृत नाम का पदार्थ दुनिया में कहीं दिखता नहीं है, परंतु सचमायने में तो मानव की जीभ में ही अमृत है, बशर्त कि वह प्रिय व हितकारी बोले ।

459. शरीर को जो भाड़े का घर समझता है, उसे यह घर खाली करते समय दुःख नहीं होता है, परंतु जो शरीर को अपना घर समझता है, मृत्यु के समय उसके दुःख का कोई पार नहीं रहता है ।

460. सुकृत की अनुमोदना करने से सुकृत का फल अनेक गुणा बढ़ जाता है ।

461. समझदार के लिए एक ईशारा ही काफी है । हनुमानजी ने सिर्फ सूर्यास्त का दृश्य देखा और उनकी आत्मा एकदम जागृत हो गई ।

462. गुरु में अयोग्यता हो, परंतु शिष्य में अद्भुत समर्पण भाव हो, तो वह शिष्य भी तर जाता है ।

463. प्रभु के प्रति भक्ति, जीवों के प्रति मैत्री और जड़ पदार्थों के प्रति विरक्ति यह भवसागर तिरने का सरल उपाय है ।

464. सांसारिक पदार्थों का ज्ञान इन्द्रियों के माध्यम से हो सकता है, परंतु

अतीन्द्रिय पदार्थों को इन्द्रियों के माध्यम से नहीं जान सकते हैं। इसके लिए तो सर्वज्ञ के वचनों पर विश्वास रखना ही जरुरी है ।

465. दान और तप मर्यादित हो सकता है, परंतु भाव-धर्म में तो कोई मर्यादा नहीं है। दान तो सीमित Limited व्यक्तियों को ही दे सकते हैं, परंतु कल्याण की कामना तो जीवमात्र की कर सकते हैं।

466. दुनिया बाहर के दुश्मनों को खत्म करने की बात करती है, जबकि प्रभु का शासन आत्मा के अंतरंग शत्रुओं से लड़ना सिखाता है ।

467. जहाँ सच्चा परोपकार होगा, वहाँ सच्चा स्वोपकार होगा ही ।

468. जो योग्य आत्मा को नहीं झुकता है, उसे आगामी भवों में जिंदगीभर झुकना पड़े, ऐसी तिर्यंच गति प्राप्त होती है, जहां मस्तक सदैव झुका रहता है ।

469. देव और धर्म तत्त्व की सच्ची पहिचान गुरु भगवंत ही कराते हैं, इसी कारण उन्हे 'देव-गुरु-धर्म' में बीच में रखा जाता है ।

470. एक चैत्यवंदन में चारों निक्षेपों से प्रभु की भक्ति रही हुई है ।

लोगस्स सूत्र के माध्यम से नाम निक्षेप द्वारा प्रभुकी भक्ति की गई है। जंकिंचि, जावंति एवं अरिहंत चेइयाणं द्वारा स्थापना निक्षेप से प्रभु की भक्ति है।

'जे अ अइया'-पद द्वारा द्रव्य निक्षेप से प्रभु की भक्ति की गई है । नमुत्थुणं सूत्र द्वारा भाव निक्षेप से प्रभुकी भक्ति है ।

471. सम्यग्दृष्टि आत्मा भीतर से जागृत होने के कारण उसके लिए पुण्य और पाप दोनों का उदय लाभकारी है ।

मिथ्यादृष्टि की आत्मा सोई हुई होने के कारण उसके लिए पुण्य और पाप दोनों का उदय हानिकारक है ।

472. सामायिक में भावधर्म की प्रधानता है, अतः उसमें द्रव्य पूजा का भी त्याग होता है ।

473. साधु की दैनिक क्रिया में नौ बार करेमि भंते सूत्र बोलकर अपनी प्रतिज्ञा को याद किया जाता है ।

474. रोग, वृद्धावस्था और मृत्यु इन तीन हमलों का अपने श्रुत ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम पर प्रभाव पडता है। इसलिए रोग व वृद्धावस्था में व्यक्ति भूल जाता है और मरने के बाद भी सब भुला दिया जाता है।

475. मिथ्यात्व के जीवित रहने पर अन्य सभी 17 पाप पुष्ट होते हैं और उसके कमजोर होते ही अन्य सभी पाप कमजोर हो जाते हैं।

जिस आत्मा में मोक्ष पाने की इच्छा पैदा होती है, उस आत्मा का मोक्ष अवश्य होता है।

476. सभी जीवों को अभयदान सर्वविरति में ही संभव है।

477. जिन मंदिर और उपाश्रय आदि धर्मस्थान मोह की गति को रोकने के लिए गति अवरोधक Speed Breaker का काम करते हैं।

478. व्रतों का स्वीकार सिंहवृत्ति से होना चाहिए तो उन व्रतों का पालन भी सिंहवृत्ति से ही होना चाहिए।

479. तीर्थंकर के अस्तित्व काल में जितनी आत्माएँ मोक्ष में जाती है, उससे भी अधिक आत्माएँ तीर्थंकर के शासन को प्राप्त करके जाती हैं।

480. आहार, विहार और निहार की क्रिया को छोड़कर तीर्थंकर परमात्मा छद्मस्थ अवस्था में प्रायः कायोत्सर्ग ध्यान में ही रहते हैं।

481. कायोत्सर्ग में काया का त्याग नहीं है, किंतु काया के प्रति रही हुई ममता का त्याग है।

482. आत्महत्या, दुःखमुक्ति का उपाय नहीं है। आत्महत्या तो कायरता की निशानी है।

483. गृहस्थों को हर वस्तु मापसर (प्रमाणसर) चाहिए, परंतु धन अमाप चाहिए।

484. पूर्व भव में नियाणा करके आए हुए होने के कारण सभी वासुदेव और प्रतिवासुदेव मरकर नरक में ही जाते हैं।

485. त्रिषष्टि शलाका पुरुषों की अकाल मृत्यु नहीं होती हैं।

486. पापों के नाश का उपाय-दुष्कृत-गर्हा है तो पुण्य के पुंज को इकट्ठा करने का उपाय सुकृत अनुमोदना है।

487. धन की मूर्च्छा उतारने के ध्येय से जो दान करते हैं वह दान ही सच्चा दान हैं ।

488. निष्काम भाव से दिए गए दान से पुण्यानुबंधी पुण्य का बंध होता है और सकाम भाव से दिए गए दान से पापानुबंधी पुण्य का बंध होता है ।

489. शरीर से ममत्व को तोड़ने का काम तप करता है और प्रभु के साथ संबंध जोड़ने का काम जप करता है ।

490. निर्मल शील पालन के फलस्वरुप स्त्री भी देवों के लिए वंदनीय और पूजनीय बन जाती है ।

491. दान, शील और तप में कुछ छोड़ते है, जब कि भाव में कुछ भी छोडने का नहीं है, फिर भी भाव-धर्म की आराधना अत्यंत ही कठिन है ।

492. अंतिम समय में भी शुभ भाव आ जाय तो भव सुधर जाय और अंतिम समय में भी अशुभ भाव आ जाय तो भव बिगड़ जाता है ।

493. शरीर रथ है और पाँच इन्द्रियाँ पाँच घोड़े हैं । मन उस रथ का सारथी है । सारथी यदि बराबर हो तो वह रथ को इच्छित स्थानपर पहुँचा सकता है ।

494. नमस्करणीय ऐसे पंच परमेष्ठि भगवंतों को जो नमस्कार नहीं करता है, उसे अगले जन्म में तिर्यंच का ऐसा भव मिलता है, जहाँ उसे सदा काल झुकना ही पड़ता है ।

495. अपने सुख की चिंता करना आर्तध्यान है ।

सबके सुख की चिंता करना धर्मध्यान है ।

496. यतनापूर्वक प्रवृत्ति करने पर हिंसा भी हो जाय तो भी पाप कर्म का अल्पबंध होता है ।

497. भगवान की द्रव्यपूजा, द्रव्य (धन) की आसक्ति को उतारने के लिए है ।

498. 9000 से अधिक हार्ट की बायपास सर्जरी करनेवाले डॉ. पवनकुमार का अनुभव है कि हृदयरोग का मुख्य कारण असंतोष अर्थात् लोभवृत्ति है ।

499. सिनोर के पं. चंदूलाल नानचंद ने 'समरो मंत्र' की रचना की थी ।

500. शंकाचार्य 8 वर्ष की उम्र में वेदों के ज्ञाता बने थे ।
16 वर्ष की उम्र में भाष्य रचा था और 32 वर्ष में दिवंगत हुए थे ।

501. सफेद रंग सत्त्व का प्रतीक है ।
लाल रंग साहस का प्रतीक है ।
पीला रंग चिंतन का प्रतीक है ।

502. कान बींधने से दम का रोग नहीं होता है ।

503. जर्मन के बर्लिन शहर की लायब्रेरी में भारत की 1 लाख हस्तलिखित प्रतियाँ हैं ।

504. विक्रम संवत् में 470 वर्ष जोडने पर वीरसंवत् होता है ।

505. भगवान महावीर के निर्वाण के 609 वर्ष बाद शिवभूति से दिगंबरमत, वि.सं. 1636 से लवजी ऋषि से स्थानकवासी मत और वि.सं. 1817 से भीखणजी से तेरापंथ का प्रारंभ हुआ ।

506. भारत में वृद्धाश्रम का प्रारंभ ई.सन्. 1950 से हुआ, आज 650 वृद्धाश्रम हैं ।

507. अज्ञानता और पराधीनता के कारण तिर्यंचों में आध्यात्मिक शक्ति का विकास संभव नहीं है । तीर्थंकर आदि विशिष्ट महापुरुषों के योग से हाथी, साँप आदि प्राणियों को बोध हो भी जाय तो भी उनकी संख्या बहुत ही अल्प है ।

508. परमाधामियों की अत्यंत मार, मरणांत उपसर्ग और देव-गुरु-धर्म के बाह्य निमित्तों का अभाव होने से नरक के जीवों में भी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास संभव नहीं है ।

509. दिव्य सुखों की आसक्ति, ममता और भोग में मग्नता आदि के कारण देवलोक में रहे देवताओं में भी आध्यात्मिक शक्ति का विकास संभव नहीं है ।

510. जिस मुमुक्षु के दिल में माता-पिता के प्रति आदर या बहुमान का भाव नहीं है, वह दीक्षा लेकर भी गुरु भगवंत का विनय बहुमान कैसे कर पाएगा ?

511. जिसके दिल में उपकारी गुरु के प्रति आदर-बहुमान-भाव नहीं है, वह त्रिलोकनाथ-देवाधिदेव परमात्मा का बहुमान कैसे कर पाएगा ?

512. जो व्यक्ति माता-पिता की आज्ञा नहीं मानता है, उनका अनादर और तिरस्कार करता है और मंदिर में जाकर प्रभु की पूजा करता है, वह तो 104^{0} बुखार में घी खाने की ही चेष्टा कर रहा है ।

513. अन्य धर्मों में व्यक्ति की प्रधानता है, जैन धर्म में गुणों की प्रधानता है ।

514. शुभ-अशुभ निमित्त को प्राप्त कर, आत्मा में रहे हुए संस्कार जागृत होते हैं ।

515. पाँच इन्द्रियों को पंच परमेष्ठी के साथ जोड़ने से ये ही इन्द्रियाँ लाभ का कारण बनती हैं । शब्द सुनो तो अरिहंतों के ! रुप देखो तो सिद्धों का । गंध लो तो आचार्यों की । रस लो तो उपाध्याय का । स्पर्श करो तो साधुजन का ।

516. संगमदेव और चंडकोशिक सर्प दोनों ने प्रभु पर उपसर्ग किया परंतु प्रभु ने चंडकोशिक को प्रतिबोध दिया-संगमदेव को नहीं, संगम के प्रसंग में प्रभु मौन रहे । कारण ? चंडकोशिक में योग्यता थी-संगम में अयोग्यता-अपात्रता थी ।

517. साधु के लिए भावपूजा प्रधान है, जबकि श्रावक के लिए द्रव्य पूजा प्रधान है । द्रव्य पूजा के बाद ही भावपूजा करने का विधान है । द्रव्य की मूर्च्छा उतारने के लिए श्रावक को सर्वप्रथम द्रव्यपूजा अनिवार्य है ।

518. जन्म के समय बालक का सिर्फ माँ के साथ संबंध था, फिर बालक ज्यों-ज्यों बड़ा होता जाता है, त्यों-त्यों संबंधों का वर्तुल भी बढ़ता जाता है ।

519. पौद्गलिक पदार्थों के संबंध दो प्रकार से टूटते हैं । दीक्षा द्वारा और मृत्यु द्वारा । मृत्यु द्रारा संबंध टूटते हैं, परंतु उन पदार्थों का ममत्व भाव नहीं टूटता है । दीक्षा धर्म की महत्ता इसी कारण है, क्योंकि उसमें इच्छापूर्वक संबंधों के ममत्व का त्याग किया जाता है ।

520. सुख बाह्य पदार्थों में नहीं है । बाह्य पदार्थों में सुख देने का स्वभाव होता, तो ज्यों-ज्यों बाह्य पदार्थ बढ़ते, त्यों-त्यों सुख बढ़ता ।

521. खाने के पदार्थ में सुख होता, तो ज्यों-ज्यों खाते जाते त्यों-त्यों सुख बढ़ना चाहिए । परंतु खाने के पदार्थ में सुख तभी तक, जब तक भूख है । भूख का दुःख मिटते ही, वे ही पदार्थ दुःख के कारण बन जाते हैं ।

522. धन के लिए जो पुण्य चाहिए, उससे भी बढ़कर पुण्य सद्बुद्धि पाने के लिए चाहिए ! धन मिलना सुलभ है, सद्बुद्धि मिलना दुर्लभ है ।

523. अंतिम समय आने पर चौदहपूर्वी भी नवकार का ही आलंबन लेते हैं ।

524. नवकार में जिनभक्ति है । क्षमापना में जीवमैत्री है । साधना के लिए जिनभक्ति और जीवमैत्री दोनों जरुरी हैं ।

525. आत्मा में सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होने पर हेयोपादेय का विवेक स्वतः पैदा हो जाता है, फिर हेय पदार्थों के त्याग के लिए और उपादेय पदार्थों के ग्रहण के लिए उपदेश की अपेक्षा नहीं रहती है । समकिती आत्मा क्षणिक व भौतिक सुख को छोड़ने जैसा ही मानती है, अतः उसके लिए त्याग खूब सरल होता है ।

526. तप द्वारा सिर्फ भोजन का त्याग ही नहीं करने का है, तप द्वारा भोजन की ममता का भी त्याग होना चाहिए । भोजन का त्याग हो और ममता का त्याग न हो तो वह तप वास्तविक फलदायी नहीं बनता है ।

527. अप्रशस्त क्रोध कर्मबंध का कारण है । तीर्थ की रक्षा तथा शील की रक्षा आदि के लिए किया गया क्रोध प्रशस्त क्रोध कहलाता है ।

528. साधुजीवन में मनोबल हो तबतक कर्म के उदय से आए रोग को भी सहन करना चाहिए । रोग सहन न होता हो और आर्त ध्यान होता हो, तभी आत्म समाधि के लिए रोग का उपचार करना चाहिए ।

529. मृत्यु के बाद जो चीज साथ में चलनेवाली है, उसके लिए पुरुषार्थ नहींवत् है और जो चीज छोड़कर ही जाना है, उसके लिए रात और दिन प्रयत्न चल रहा है-यह हमारी कैसी मूर्खता है ।

530. 'ज्यों ज्यों धन बढ़ेगा, त्यों त्यों सुख बढ़ेगा' यह दुनिया की मान्यता है। जबकि प्रभु का शासन इससे विपरीत ही बात करता है। ज्यों-ज्यों जीवन में त्याग बढ़ेगा, त्यों त्यों सुख बढ़ेगा।

531. ज्ञान प्राप्ति के लिए जीवन में विनय गुण जरुरी है। जो विनीत है, वही ज्ञान प्राप्त कर सकता हो।

532. विनीत शिष्य ही गुरु की कृपा प्राप्त कर सकता है, भले ही वह गुरु से कोसों दूर रहता है।

533. पुण्य के उदय से किसी वस्तु को प्राप्तकर दूसरों को हल्का बताने की चेष्टा करना उसी का नाम 'मद' है।

534. लाभांतराय कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त सामग्री का भोग भी भोगांतराय कर्म का क्षयोपशम होगा, तभी कर सकोगे! भोगांतराय कर्म का क्षयोपशम नहीं है, तो चाहे जितनी सामग्री प्राप्त हुई हो, उसके एक अंश का भी उपभोग नहीं कर सकते हैं।

535. धन, परिवार, दुकान आदि के ममत्व को छोड़ना आसान है, परंतु शरीर के ममत्व को छोड़ना अत्यंत ही कठिन है।

536. बाह्य साधनों से शांति मिलनेवाली नहीं है, शांति तो समता की साधना से ही मिलती है।

537. अपने सुख-दुःख का विचार तो सभी प्राणियों को हैं, परंतु जीवमात्र के सुख-दुःख का विचार 'सबको सुख मिले और सबका दुःख दूर हो' यह सिर्फ तीर्थंकर की आत्मा को ही आता है।

538. पुण्य से प्राप्त शक्तियों का उपयोग स्वयं के लिए करे, तो पाप बंध हो और दूसरे जीवों के दुःख निवारण के लिए करे तो पुण्य का बंध होगा।

539. धर्मप्राप्ति के लिए जिनभक्ति और जीवमैत्री दोनों जरूरी हैं-एक की भी उपेक्षा करने पर जीवन में सच्चा धर्म नहीं आ सकता है।

540. क्षणिक सुखों में आसक्त व्यक्ति पर अंतरंग दुश्मन हावी हो जाते हैं।

541. खारा जल पीने से प्यास बुझती नहीं, बढ़ती है, उसी प्रकार इच्छाओं की पूर्ति से इच्छाएँ शांत नहीं होती हैं, बल्कि बढ़ती ही हैं।

542. साहस की हार, सबसे बड़ी हार है । जिसका मनोबल टूट गया, वह अपने जीवन में कुछ भी हासिल नहीं कर सकता है ।

543. अपना अनंतकाल निगोद में व्यतीत हुआ है, यही कारण है कि धर्म-कार्य में प्रमाद आता है ।

544. रावण बनना भी सरल नहीं है, रावण ने सीता का अपहरण किया परंतु बलात्कार नहीं ।

545. जिस संबंध को जोड़ने में ज्यादा राग किया, उस संबंध के टूटने पर उतना ही ज्यादा दुःख होता है ।

546. सिद्ध पद ही एक ऐसा पद है, जिसे प्राप्त करने के बाद कभी छोड़ना नहीं पड़ता है । बाकी तो दुनिया में जितने भी पद हैं, मौत द्वारा उन पदों को छोड़ना ही पड़ता है ।

547. सम्यग्दृष्टि के अवधिज्ञान का उपयोग स्व-पर कल्याण के लिए होता है, जबकि मिथ्यादृष्टि के विभंगज्ञान का उपयोग स्व-पर अनर्थ के लिए ही होता है ।

548. अपने में दोष रहे हुए हैं, इसलिए दूसरों में दोष दिखाई देते हैं । गुणवान को तो सर्वत्र गुण ही दिखाई देते हैं ।

549. पापी की उपेक्षा करो, किंतु घृणा नहीं । जो ज्यादा पापी है, वह ज्यादा दया का पात्र है ।

550. किसी पर क्रोध करके हम अपने जीवन में नए दुश्मन को ही पैदा करते हैं और क्षमा कर मित्र ही बढ़ाते हैं ।

551. तीर्थयात्रा संसार-सागर से तिरने के लिए है, जबकि तीर्थों में जाकर भी, संसार के सुखों को मांगकर, संसार में डूबने का ही काम करते है ।

552. छह खंड को जीतनेवाला भी अंतरंग शत्रु के आगे मात खा जाता है ।

553. अंतरंग शत्रुओं को हराने की बात तो दूर रही, दुर्भाग्य यह है कि हम अंतरंग शत्रुओं को पहिचान भी नहीं पा रहे हैं । उन शत्रुओं को भी हमने मित्र ठीक समझ लिया है ।

554. इन्द्रियों के विजेता नहीं बन सको, तो कम-से-कम इन्द्रियों के गुलाम तो मत बनो।

555. निंदा करने में जीभ का उपयोग किया, तो याद रखना अगले जन्म में जीभ मिलनेवाली नहीं है।

556. व्रत-नियम तो आत्मा के लिए लक्ष्मणरेखाएँ हैं। लक्ष्मणरेखा के भीतर सीता सुरक्षित थी, लक्ष्मणरेखा का उल्लंघन किया, तो सीता का अपहरण हुआ।

557. Head, Hand and Heart में पवित्रता नहीं तो वह मानव, मानव कहलाने के लायक नहीं। बुद्धि में सरलता, हाथों में नीतिमत्ता व हृदय में करुणा होनी चाहिए।

558. अनुकूलता पाने की इच्छा करना आर्तध्यान है, तो प्राप्त हुई अनुकूलता चली न जाय, ऐसा चिंतन करना भी आर्तध्यान ही है।

559. सिर्फ कष्ट सहन करने से आत्मा की मुक्ति नहीं है, परंतु समतापूर्वक कष्ट सहन करने से ही आत्मा की मुक्ति है।

560. गुरु में वात्सल्यभाव चाहिए और शिष्य में समर्पण भाव चाहिए।

561. खूनी व्यक्ति के हाथ से बनाई गई रसोई, खानेवाले के दिल में अशुभभाव पैदा कर सकती है।

562. अरिहंत आदि नवपद आत्मा को संसार से तारते हैं, तो पाँच इन्द्रियाँ और चार कषाय ये नौ-आत्मा को संसार में डुबोते हैं।

563. तुंबे का स्वभाव है-पानी में तैरने का, परंतु उस पर मिट्टी का बार बार लेप कर उस लेप को सूखा दें तो भारी बना वह तुंबा पानी में डूब जाएगा-बस आत्मा का स्वभाव भी ऊर्ध्वगमन का है, परंतु कर्म से भारी होकर आत्मा इस संसार में डूब जाती है।

564. जो प्रभु ने पाया, वह पाने के लिए और जो प्रभु ने छोड़ा, उसे छोड़ने के लिए प्रभु के पास जाएँ तो प्रभु के साथ हमारा नाता जुड़ सकता है।

565. जीवन में सबसे अधिक पाप जवानी में ही होते हैं, अतः जवानी में सद्‌गुरु का नियंत्रण जरुरी है।

566. जो अहं से भरा होता है, वह सद्गुरु से कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाता है, परंतु जो `अहं भाव' से खाली होता है, वही पूर्णता प्राप्त कर सकता है ।

567. बाह्य पदार्थों का त्याग करना आसान है, परंतु भीतर रहे अभिमान को छोड़ना मुश्किल है ।

568. नवकार की साधना हमें नम्र बनाती है । जो योग्य पात्र के प्रति झुकता है, वह स्वयं योग्यता प्राप्त करता है ।

569. जिनाज्ञा की विराधना, आत्मा को संसार में भटकाती है और जिनाज्ञा की आराधना, आत्मा को संसार से मुक्त करती है ।

570. कर्म तो जड़ है, द्रव्यकर्म आत्मा को सजा देते हैं-भावकर्म के कारण ! राग-द्वेष भाव कर्म हैं । भावकर्म के कारण ही द्रव्यकर्म आत्मा पर राज्य करने में समर्थ बनते हैं ।

571. भविष्य में आनेवाले उपसर्गों को दूर करने के लिए इन्द्र ने महावीर प्रभु से प्रार्थना की, मगर प्रभु ने इन्द्र को इन्कार कर दिया । `मुझे तेरी मदद नहीं चाहिए ।' हँसते हँसते कर्म मैंने बाँधे है, तो उन कर्मों की सजा भी हँसते हँसते मुझे ही सहन करनी होगी ।

572. बाल जीवों के कल्याण के लिए ही आचार्य भगवंत अत्यंत ही सरल व सुबोध शैली में प्रकरणग्रंथों का सृजन करते हैं ।

573. आगम के गहन पदार्थों को `जीवविचार' आदि प्रकरण ग्रंथों के माध्यम से जगत् एक पहुँचाने का काम आचार्य भगवंतों ने किया है ।

574. गीतार्थ आचार्य भगवंतों के उपदेश को भी प्रभुवचन तुल्य मानकर पूर्ण श्रद्धा के साथ उनका श्रवण करना चाहिए ।

575. तारक परमात्मा शासन की स्थापना कर अपने आयुष्यपर्यंत उस शासन की धुरा को स्वयं वहन करते हैं । उनके विरह में शासन की धुरा पूज्य आचार्य भगवंत संभालते हैं ।

576. ऋषभदेव प्रभु का शासन 50 लाख करोड़ सागरोपम तक चला । भगवान महावीर का शासन 21000 वर्ष तक चलेगा-यह सब पूज्य आचार्य भगवंतों पर ही आधारित है ।

577. देव, गुरु और धर्म में गुरुतत्त्व को केन्द्र में रखा है । अरिहंतदेव और अरिहंत प्ररुपित धर्म की पहिचान गुरु भगवंत ही कराते हैं, अतः उनका खूब-खूब उपकार है ।

578. बचपन खेलकूद में चला जाता है, जवानी मौज-मजा और मस्ती में चली जाती है और बुढ़ापे में आदमी कमजोर हो जाता है, फिर धर्म आराधना के लिए अवकाश कहाँ रहता है ?

579. तारक तीर्थंकर परमात्मा जगत् के जीवों के कल्याण के लिए धर्मशासन की स्थापना करते हैं । प्रभु की सबसे बड़ी विशेषता है कि वे स्वयं कृतकृत्य होकर शासन की स्थापना के लिए तैयार हुए हैं ।

580. केवलज्ञान की प्राप्ति के बाद आत्मा कृतकृत्य हो जाती हैं, उनका स्वयं के लिए कुछ भी पुरुषार्थ बाकी नहीं रहता हैं, फिर भी करुणा के भंडार प्रभु ने जगत् के जीवों के उद्धार के लिए शासन अर्थात् तीर्थ की स्थापना की ।

581. केवलज्ञान की प्राप्ति तक प्रभु का पुरुषार्थ स्वकल्याण के लिए था, जबकि केवलज्ञान की प्राप्ति के बाद प्रभु का पुरुषार्थ जगत् के उद्धार के लिए होता हैं ।

582. प्रभु अपने श्रम की उपेक्षा करके भी रोज छहछह घंटों तक धर्म का उपदेश देते हैं ।

583. प्रकृति के सभी तत्त्व हमें परोपकार की ही प्रेरणा देते हैं । परोपकार के लिए ही नदी बहती है, परोपकार के लिए ही वृक्ष पर फल लगते हैं और परोपकार के लिए ही सूर्य-चंद्र प्रकाश देते हैं ।

584. धर्म-पुरुषार्थ द्वारा प्रभु ने जो कुछ प्राप्त किया, वह जगत् के जीवों को देने का ही काम किया ।

585. प्रभु शासन को पाए हुए आचार्य भगवंत भी जगत् के जीवों के कल्याण के लिए ही प्रभुशासन की धुरा को वहन करते हैं ।

586. बिना सोचे-समझे ही, किसी पर विश्वास कर लेना...अथवा अंध-परंपरा का सोचे-समझे बिना विश्वास करना, अंध-विश्वास कहलाता है।

587. विज्ञान के इस युग में अणु को तोड़ा जा रहा है और उसमें से शक्ति उत्पन्न की जा रही है। विज्ञान अणु (?) को तोड़नें में सक्षम बना है, इस के साथ ही वह दूसरों के दिल को तोड़ने में भी समर्थ बना है।

588. दिन प्रतिदिन, विज्ञान की नई-नई शोधें बाहर आती जा रही हैं...परन्तु उन शोधों के परिणाम स्वरुप व्यक्ति का दिल भी अत्यंत ही संकुचित बनता जा रहा है।

589. कौन कहता है कि आज के युग में नीति से जीवन नहीं जीया जा सकता है ? सचमुच यदि नीति से जीवन जीने की तीव्र तमन्ना हो, तो वर्तमान युग में भी जी सकते हैं। इसके लिए जरुरी है-जीवन में से विलासिता को समाप्त कर देने की।

590. यदि व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को मर्यादित करलें तो उसके जीवन की बहुत कुछ समस्याएँ आसानी से हल हो सकती हैं।

591. ज्यों ज्यों आवश्यकताएँ बढ़ती हैं, त्यों त्यों उन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए गैर-मार्ग से अर्थार्जन की भूख भी बढ़ती जाती हैं।

592. वर्तमान दुनिया में फैशन और विलासिता के नाम पर पाप हो रहे हैं, यदि फैशन और विलासिता को कम कर दिया जाय तो व्यक्ति आसानी से अल्प सामग्री द्वारा जीवन जी सकता है।

593. 1000 वर्ष की साधना के फलस्वरुप ऋषभदेव प्रभु ने केवलज्ञान प्राप्त किया और सर्वप्रथम वह केवलज्ञान माँ को ही अर्पित किया।

594. गर्भ में रहे महावीर प्रभु के दिल में भी कैसी अपूर्व मातृभक्ति थी-कि उन्होंने माँ को लेश भी पीड़ा न हो, इसलिए गर्भ में रह कर भी अपने शरीर की हलन-चलन बंद कर दी थी।

595. भाई-भाई अलग हो जाने के बाद जिसके साथ माता-पिता रहते हैं, वह बेटा यदि कहता है कि माता-पिता मेरे साथ में हैं, तो यह उसके हृदय की संकुचित मनोवृत्ति है। उसके हृदय की तुच्छता के दर्शन यहाँ होते हैं और यदि वह कहता है कि मैं अपने माता-पिता के साथ में रहता हूँ तो उसमें उसकी मातृ-भक्ति, पितृ-भक्ति के दर्शन होते हैं।

596. वयोवृद्ध माता-पिता को साथ में रखकर उनकी सेवा शुश्रूषा करनेवाला माता-पिता पर कोई उपकार नहीं कर रहा है, बल्कि वह तो सिर्फ अपने कर्तव्य का पालन ही कर रहा है।

597. पाप के उदय को हँसते-हँसते सहन करना ही पाप को खपाने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

598. गजसुकुमाल मुनि के मस्तक पर अँगारे डाले गए, उन्होंने क्रोध नहीं किया! अपकारी को उपकारी माना! 'मेरा श्वसुर तो मुझे मोक्ष की पगड़ी पहिना रहा है' ऐसा मानकर कष्ट सहन किया-उन्हें केवलज्ञान हो गया।

599. खंधक मुनि की चमड़ी उतारने का आदेश राजा ने दिया 'वे जल्लाद छुरी से खंधक मुनि की चमड़ी उतारने लगे' मुनि बोले, तू तो भाई से भी बढ़कर है। मेरे अनादि के कर्म बंधन को तोड़ने में, तू मुझे मदद कर रहा है।

600. अर्णिकापुत्र आचार्य को देवी ने भाले से बींध लिया। उनके शरीर में से खून टपकने लगा और पानी में गिरने लगा। उन्हें अपने शरीर की पीडा की परवाह नहीं थी। वे बोले, 'अहो! मेरे रक्त की बूँदों से अप्काय के जीवों की कितनी भयंकर हिंसा हो रही है।' इस उत्तम भावना के फलस्वरुप उन महात्मा को केवलज्ञान हो गया।

601. पाप खपाने का दूसरा उपाय है-पाप करना ही पडे तो दु:खी हृदय से करे। पाप करके कभी खुश न हों! पाप का पश्चात्ताप हृदय में सतत जीवित रहे। जो पाप हो गए हैं, उसका हृदय में तीव्र पश्चात्ताप भाव हो।

602. गुरुद्रोही गोशाला मरकर 12 वें देवलोक में गया और प्रभुभक्त श्रेणिक मरकर पहली नरक में। पाप हो जाने के बाद श्रेणिक ने भरपेट उसकी प्रशंसा-अनुमोदना की और चार-चार की हत्या करनेवाला दृढ़प्रहारी पश्चात्ताप के द्वारा शुद्ध हो गया।

603. अपनी सगी बहन के साथ कुकर्म करनेवाला चंद्रशेखर राजा पश्चात्ताप द्वारा उसी भव में मोक्ष चला गया।

604. भव आलोचना अर्थात् इस भव में किए हुए पापों का तीव्र पश्चात्ताप ! इस पश्चात्ताप से आत्मा पाप के भार से हल्की हो जाती है। आत्मा में और कोमलता पैदा होती है पापों का आकर्षण समाप्त हो जाता है।

605. सच्चे हृदय से क्षमापना की जाय तो उसका अंतिम फल मोक्ष की प्राप्ति है।

606. भूल हो जाने के बाद, उस भूल की स्वीकृति होनी ही चाहिए। भूल की स्वीकृति हो जाने से उस भूल की परंपरा, वहीं समाप्त हो जाती है।

607. गौतम स्वामी ने भी आनंद श्रावक से क्षमापना की थी।

608. चंदनबाला से क्षमापना करते समय मृगावती को केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई थी।

609. जीवन में समाधि की सबसे अधिक महत्ता है। इसी कारण सभी तप के पच्चक्खाण में सव्व समाहि-वत्तियागारेणं आगार अवश्य रखा जाता है। समझदार व्यक्ति शक्य में ही प्रयत्न करता है, अशक्य में नहीं।

610. मौत का निवारण अशक्य है, परंतु मृत्यु को महोत्सव बनाना शक्य है।

611. दान-शील-तप का आचरण भी उसी प्रकार से करना चाहिए जिससे समाधि बनी रहे।

612. गोशाला को अंत समय में समाधि मिली तो वह 12 वें देवलोक में पहुँच गया।

613. श्रेणिक को अंत समय में समाधि नहीं मिली, तो वह मरकर पहली नरक में चला गया।

614. क्रोधातुर बना युगबाहु नरक का अतिथि बन जाता, परंतु उसे मदनरेखा ने समाधि दी तो वह पाँचवें देवलोक का देव बन गया ।

615. नयसार के भव में 'भगवान महावीर' बनने का बीज पड़ा !

नयसार जंगल में था, दोपहर का समय था। खाद्य-सामग्री पूरी तैयार थी, परंतु नयसार ने सीधा भोजन नहीं किया। उसके अन्तर्मन में यह विचार पैदा हुआ । 'किसी साधु-संत को दान देकर फिर मैं भोजन करुँगा ।' इस शुभ विचार के फलस्वरूप नयसार को साधु-भगवंतों का योग भी मिल गया और उनको दिए दान के फलस्वरुप उसको सम्यक्त्व की भी प्राप्ति हो गई ।

616. वस्तु का अपूर्ण दर्शन राग पैदा कराता है जबकि वस्तु का पूर्ण दर्शन वैराग्य भाव पैदा कराता है ।

617. स्त्री के बाह्य सौंदर्य, रूप आदि के दर्शन से हृदय में राग-भाव पैदा होता है, वह स्त्री का अपूर्ण-दर्शन है। उसके शरीर के भीतर रही अशुचि का दर्शन वैराग्य भाव पैदा कराता है ।

618. रावण सीता के रूप में पागल बना। सीता तो उसे नहीं मिली, परंतु जगत् में वह बदनाम हो गया ।

619. कुत्ता हड्डी को चूसता है, उसे हड्डी में से तो कुछ भी स्वाद नहीं मिलता है। परंतु हड्डी को जोर से चबाने के कारण उसके मसूढों में से खून निकलता है। उस खून का मुँह में स्वाद आने के कारण वह यह मानता है कि मुझे हड्डी में से खून मिल रहा है। वास्तव में, यह भ्रम ही है।

स्त्री के भोग में अज्ञानी जीव सुख की कल्पना करता है, परंतु वास्तव में तो वह अपनी ही शक्ति का व्यय कर रहा होता है ।

620. रूप का सौंदर्य शील है अर्थात् शीलयुक्त रूप प्रशंसनीय है। जिस रूप के साथ शील न हो, तो वह रूप प्रशंसनीय नहीं है ।

621. तप का सौंदर्य समता है। समतापूर्वक किया गया तप सफल एवं सार्थक है। समतारहित तप तो सिर्फ कायकष्ट ही है ।

622. इसी प्रकार सुख का सौंदर्य है-वैराग्य ! वैराग्य से सुख की सुंदरता है ।

623. महावीर प्रभु अपने 26 वें भव में प्राणत नाम के 10 वें देवलोक में देव थे । देवलोक में देवियों की उत्पत्ति दूसरे देवलोक तक ही है । मित्रदेव महावीर प्रभु को दूसरे देवलोक में ले जाते हैं । वहाँ देवियों के रूप-सौंदर्य, हावभाव, अंगमरोड़ आदि के दर्शन कराते हैं, परंतु महावीर प्रभु की आत्मा तो सर्वथा अलिप्त-अनासक्त है । उन्हें इन देवियों का कोई आकर्षण नहीं है ।

624. ऋषभदेव प्रभु की पाट परंपरा 50 लाख करोड़ सागरोपम तक चली, परंतु उसमें एक भी राजा ऐसा पैदा नहीं हुआ, जिसने पुत्र को राजगद्दी सौंपकर दीक्षा अंगीकार नहीं की हो अर्थात् असंख्य पाट परंपरा में आए राजाओं ने दीक्षा अंगीकार की है ।

625. धर्म अच्छा है, धर्म करने से पैदा होनेवाला पुण्य भी अच्छा है, परंतु उस पुण्य के उदय के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले भोगसुख अच्छे नहीं हैं । उन भोगसुखों में जिन्हें आसक्ति पैदा हो गई, उन आत्माओं को वह धर्म लाभकारी नहीं बन पाया ।

626. चंदन सुगंधित है, परंतु उससे पैदा होनेवाली आग तो जलाने का ही काम करती है ।

627. सुखी के प्रति ईर्ष्या, दु:खी के प्रति उपेक्षा, प्राणियों के सुकृतों में द्वेष और अधर्मी लोगों के प्रति राग-द्वेष का त्याग कर समता परिणति, शुद्ध-मैत्री आदि भावनाओं को प्राप्त कर अध्यात्म का आश्रय करना चाहिए ।

628. कर्म दु:ख की परिस्थिति, दु:ख का वातावरण खड़ा करने में समर्थ हैं, परंतु जब तक आत्मा उन दु:खो को अपने मन पर नहीं लेती है, तब तक दु:ख की परिस्थिति होने पर भी आत्मा दु:खी नहीं होती है ।

629. मन में संतोष हो तो गृहस्थ 5000 के वेतन में भी मस्त रह सकता है और मन में असंतोष हो तो 50000 का वेतन भी कम ही लगता है ।

630. साधु जीवन में बाह्य दुःख होने पर भी उन दुःखों को मन पर नहीं लेने से उन दुःखों में भी साधु परम आनंद का अनुभव कर सकता है ।

631. पाप की अपेक्षा धर्म की ताकत ज्यादा है, उसी प्रकार कर्म की अपेक्षा आत्मा की ताकत ज्यादा है ।

632. दुःख से भयभीत होकर दीक्षा लेने की नहीं है, बल्कि पाप से डरकर दीक्षा लेने की है ।

633. भवितव्यता को बदलने की ताकत किसी में भी नहीं है । जो भवितव्यता को स्वीकार लेता है, उसे कोई भी परिस्थिति दुःखी नहीं कर सकती है ।

634. शराब के नशे से भी सुख का नशा भयंकर है । शराब से स्मरणशक्ति समाप्त होती है, जबकि सुख के नशे से अपनी स्वभाव दशा को ही भयंकर नुकसान होता है ।

635. वृक्ष को यदि जीवंत-फलाफूला रखना है तो उसके मूल में सिंचन होना जरूरी है । जीवन-वृक्ष को सद्‌गुणों से फलाफूला रखना हो, तो दूसरों के सद्‌गुणों की प्रशंसा और अनुमोदना खूब खूब जरूरी है । दूसरों के गुणों की अनुमोदना से अपने गुण-वृक्ष का सिंचन ही होता है ।

636. अपने जीवन में दोष-वृक्ष तभी तक हराभरा रहता है जब तक उसे परनिंदा और आत्म-प्रशंसा का सिंचन मिलता रहता है ।

637. वृक्ष के मूल में एसिड डालने से वृक्ष नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार अपने दोषों की स्वीकृति से अपना दोष वृक्ष भी समाप्त हो जाता है । अपने दोषों को हृदय से स्वीकार करो ।

638. जो नदी दो किनारों के बीच रहती है, वह विशाल-भूमि का सिंचन करती है लेकिन वही नदी जब अपनी मर्यादाओं को तोड़ देती है, तो भयंकर संहार ही करती है । मर्यादा में रही नदी सब की प्यास बुझाती है, जबकि मर्यादा को तोड़नेवाली नदी सब के जीवन में तबाही मचाती है ।

639. धर्म करते-करते पाप का पक्षपात टूटना चाहिए। धर्म क्रियाएँ खूब करे परंतु पाप का पक्षपात बना रहे, तो वह धर्म आत्महितकारक नहीं बनता है। पाप से भी पाप का पक्षपात ज्यादा भयंकर है, अतः धर्म आराधना का मुख्य उद्देश्य पाप के पक्षपात को तोड़ना होना चाहिए।

640. राग-द्वेष की चांडाल चौकड़ी से मुक्त बनने के लिए वैराग्य-भाव और वात्सल्य भाव को जीवन में आत्मसात् करना खूब जरुरी है।

641. साई इस संसार में भांत भांत के लोग।
सबसे हिलमिल चालिये, नदी नाव संयोग ।।
बलिहारी उस दुःख की, हर पल राम रटाय।

642. सारी दुनिया सुख की पुजारिन है। दुनियां दुःख से दूर भागती है। दुनियां कहती है- दुःख खराब है, सुख अच्छा है। जबकि आध्यात्मिक जगत् की बात ही निराली है। अध्यात्म तो कहता है-दुःख अच्छा है, सुख खराब है।

क्योंकि जीवन में सुख का आगमन होने पर व्यक्ति प्रभु से दूर होता जाता है, जबकि दुःख का आगमन होने पर व्यक्ति प्रभु के नजदीक आता जाता है।

643. बालक को अपने सच्चे घर की पहिचान नहीं होने से ही मिट्टी के घर में खुश होता है, उसी प्रकार जीवात्मा को अपने मौलिक स्वरुप की पहिचान नहीं होती हैं, तभी तक उसे संसार में रस पैदा होता है।

644. अंधेरे कमरे में से कचरा साफ करना हो तो सर्वप्रथम प्रकाश की आवश्यकता रहती है, उसी प्रकार आत्मा में से कर्म के कचरे को दूर करना हो तो सर्वप्रथम ज्ञानरुपी प्रकाश की आवश्कता रहती है।

645. धन की प्राप्ति में भाग्य की प्रधानता है।
धर्म की साधना में पुरुषार्थ की प्रधानता है।
धर्म से धन भी मिलता है, काम-सुख भी मिलते हैं और मोक्ष भी मिलता

है, परंतु अर्थ और काम तो आत्मा को संसार में भटकानेवाले हैं, अतः धर्म की आराधना मोक्ष के लक्ष्यपूर्वक करनी चाहिए ।

646. भवचक्र में द्रव्य-चारित्र की प्राप्ति अनंत बार हो सकती है, परंतु भाव-चारित्र की प्राप्ति अधिकतम आठ बार । उसके बाद तो उस आत्मा का अवश्य मोक्ष होता है ।

647. जिसने जिनवचन का अमृतपान किया हो, उसे मृत्यु का भय भी सता नहीं सकता है, ऐसी आत्मा तो मृत्यु के प्रसंग में भी प्रसन्न रहती है ।

648. जगत् के जीवमात्र का हित तो कभी होनेवाला नहीं है, परंतु जगत् के जीवमात्र के कल्याण की कामना तो कर सकते हैं । वह पवित्र भावना ही आत्मा को तीर्थंकर बनाती है ।

649. भरत क्षेत्र की अपेक्षा से इस अवसर्पिणी काल में अरिहंत 24 ही हुए, जब कि सामान्य केवली, आचार्य, साधु आदि असंख्य हो गए । इससे भी गुरुतत्त्व की महिमा का ख्याल आ जाता है ।

650. `जिस प्रकार आँख होने पर भी प्रकाश के अभाव में हम कुछ भी नहीं देख सकते हैं, उसी प्रकार गुणनिधि ऐसे सद्गुरु के अभाव में होशियार व्यक्ति भी सद्धर्म को प्राप्त नहीं कर सकता है ।

651. पंचसूत्र में कहा गया हैं- गुरु के प्रति बहुमान भाव एवं उनकी आज्ञा का पालन आदि करने से परम गुरु (अरिहंत परमात्मा) का योग प्राप्त होता है ।

652. `प्रार्थना सूत्र' में भी हम शुभ गुरु के योग और उनकी वचन-सेवा अर्थात् आज्ञा पालन की प्रार्थना करते हैं ।

653. निंदक आपकी निंदा करता है तो आप अकुलाते क्यों हो ? उस समय विचार करें-यदि आप में दोष हैं तो उस निंदक का आभार मानना चाहिए और यदि आप में दोष नहीं हैं, तो दर्पण पर लगे दाग की भाँति आपको अकुलाने की कोई आवश्यकता नहीं हैं, क्योंकि किसी के कहने मात्र से हम दोषयुक्त नहीं बन जाते हैं ।

654. दान का फल वस्तु के आधार पर नहीं, किंतु आपकी वृत्ति के आधार पर है। क्या दिया ? यह महत्त्व की वस्तु नहीं है, किंतु किस भाव से दिया- यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

655. जो कुछ भी बाहर से हम अपने शरीर में लेते हैं, वह सब आहार ही है। आँख से दृश्य का, कान से ध्वनि का, नाक से गंध का, जीभ से रस का और त्वचा से स्पर्श का आहार होता हैं।

656. जो संसार के ऐश्वर्य का बोध कराए, उसे इन्द्रियां कहते हैं।

657. जैसे लकड़ी को घुन खा जाता है, कागज को दीमक खा जाता है, लोहे को जंग नष्ट कर देता है, बुढ़ापा सौंदर्य को हर लेता है, क्रोध विवेक को नष्ट करता है, अग्नि सब कुछ भस्म कर देती है, उसी प्रकार कामुकता की आग पुरुष के पौरुषबल को नष्ट कर देती है।

658. शरीर की ऊर्जा को सही दिशा न दी जाए, उसका उचित उपयोग न किया जाय तो वह अपना रास्ता स्वयं निकाल लेती है। जवानी की ऊर्जा नदी की तरह बहनेवाली है, उसे रोक नहीं सकते, सिर्फ सही दिशा दे सकते हैं।

659. कष्टों को सहन करना आसान है, परंतु किये हुये पापों का प्रायश्चित्त स्वीकार करना, कठिन है।

660. माल का उत्पाद फैक्ट्री में होता है, परंतु उस माल को बेचने के लिए तो बाजार में नमुना ही ले जाया जाता है। नमुना पसंद पड़ गया तो माल को बिकने में देर नहीं लगती है।

पूर्ण सुख मोक्ष में है, परंतु उसका नमुना समता है। जिसे समता का सुख पसंद पड़ गया, उसे मोक्ष का सुख पसंद पड़ेगा ही।

661. जो आत्माएँ मोहाधीन होती हैं, उन पर कर्मसत्ता का शासन चलता है। जिसने मोह को जीत लिया, कर्मसत्ता भी उनके अनुकूल बन जाती है।

662. तीर्थंकर परमात्मा सूर्य समान हैं ।
गणधर भगवंत चंद्र समान हैं ।
आचार्य भगवंत दीपक समान हैं ।

663. जहाँ वैराग्य होगा, वहाँ एक मात्र मोक्ष की ही अभिलाषा रहेगी । संसार के सभी सुख नश्वर, तुच्छ व छोड़ने योग्य लगे तो ही सच्चा वैराग्य मानना चाहिए ।

664. देवलोक के दिव्य सुख भी काम्य नहीं हैं, क्योंकि वे सुख भी एक दिन नष्ट हो जाने के स्वभाववाले हैं । मोक्ष में सुख का प्रारंभ है, किंतु अंत नहीं है ।

665. ICU में चाहे जितनी अनुकूलता मिलती हो, परंतु समझदार व्यक्ति को वह पसंद नहीं । बस, संसार में चाहे जितने भौतिक सुख मिलते हो, फिर भी विवेकी आत्मा को वे बिल्कुल पसंद नहीं हैं ।

666. द्रव्यदया तो दुःखी प्राणीपर ही करने की होती है परंतु भावदया तो अपनी आत्मापर भी कर सकते हैं । दुःख के कारणभूत पाप को दूर करने की भावना भावदया कहलाती है ।

667. समता भाव आए बिना ममता भाव का नाश नहीं हो सकता है ।

668. कायर व्यक्ति उत्साह में आकर कार्य का प्रारंभ तो कर देते हैं, परंतु कष्ट आते ही पीछे हट जाते हैं, जबकि सत्त्वशाली व्यक्ति चाहे जितने विघ्न आए, वे कभी पीछे नहीं हटते हैं ।

669. भोजन से शरीर की पुष्टि होती है, उसी प्रकार सद् विचारों से मन पुष्ट बनता है ।

670. आसक्ति का संबंध सामग्री से नहीं, बल्कि मन से है । आसक्ति न हो तो छह खंड का साम्राज्य भी परिग्रह नहीं है और आसक्ति हो तो अल्पसामग्री भी महापरिग्रह है ।

671. संसार के सुख को पाने के लिए हमारी आत्मा ने जो प्रयत्न-पुरुषार्थ किया है, अतः कभी भी जा सकता है, जबकि कर्म के क्षय से प्राप्त आत्मगुण कभी भी जाते नहीं हैं, वे हमेशा स्थायी रहते हैं ।

672. चौदह पूर्व का ज्ञान भी ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त हुआ ज्ञान है, अतः कभी भी जा सकता है, जबकि कर्म के क्षय से प्राप्त आत्मगुण कभी भी जाते नहीं हैं, वे हमेशा स्थायी रहते हैं ।

673. व्रत-नियम ग्रहण कर, जो व्रतपालन के लिए प्रयत्नशील है, फिर भी भूल से कभी नियम का भंग हो जाता है, तो उसे थोड़ा प्रायश्चित्त आता है, परंतु जो प्रमाद के वशीभूत होकर नियम को स्वीकार ही नहीं करता है, उसे बड़ा प्रायश्चित्त आता है ।

674. प्रतिकूल संयोगों में किए हुए धर्म का अत्यधिक महत्त्व है । अनुकूलता में धर्म कर लेना कोई बड़ी बात नहीं है । संयोग प्रतिकूल हो, फिर भी धर्म में दृढ़ रहना, यही महत्त्वपूर्ण है ।

675. पापपूर्ण आचरण जो थोड़े समय के लिए है, परंतु पाप की सजा भारी है, अतः जीवन में पाप करते समय लाख बार विचार करना चाहिए ।

676. जगत् के सभी जीवों से भी बढ़कर पुण्य का उदय तीर्थंकर परमात्मा को होता है, फिर भी वे परमात्मा पुण्य के उदय से प्राप्त सामग्री का त्याग ही करते हैं ।

677. काया से पाप करने के लिए शारीरिक बल चाहिए, परंतु मन से पाप तो काय-बल बिना भी हो जाते हैं । काया से पाप सीमित होते हैं, परंतु मन से पाप अमर्यादित होते हैं ।

678. प्रभु के ध्यान से आत्मा स्वयं परमात्मा बन जाती है ।

679. स्वाध्याय और जाप से मनपर नियंत्रण किया जा सकता है ।

680. जीवन में आनेवाला हर कष्ट हमें नया और असह्य लगता है । परंतु भूतकाल में अपनी आत्मा ने हर दुःख-हर कष्ट सहन किया है ।

681. भरत क्षेत्र की अपेक्षा से इस अवसर्पिणी काल में अरिहंत 24 ही हुए, जब कि सामान्य केवली, आचार्य, साधु आदि असंख्य हो गए। इससे भी गुरुतत्त्व की महिमा का ख्याल आ जाता है।

682. जिस प्रकार आँख होने पर भी प्रकाश के अभाव में हम कुछ भी नहीं देख सकते हैं, उसी प्रकार गुणनिधि ऐसे सद्‌गुरु के अभाव में होशियार व्यक्ति भी सद्धर्म को प्राप्त नहीं कर सकता है।

683. पंचसूत्र में कहा गया हैं- 'गुरु के प्रति बहुमान भाव एवं उनकी आज्ञा का पालन आदि करने से परम गुरु (अरिहंत परमात्मा) का योग प्राप्त होता है।

684. **'प्रार्थना सूत्र'** में भी हम शुभ गुरु के योग और उनकी वचन-सेवा अर्थात् आज्ञा पालन की प्रार्थना करते हैं।

685. निंदक आपकी निंदा करता है तो आप अकुलाते क्यों हो ? उस समय विचार करें-यदि आप में दोष है तो उस निंदक का आभार मानना चाहिए और यदि आप में दोष नहीं है तो दर्पण पर लगे दाग की भाँति आपको अकुलाने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि किसी के कहने मात्र से हम दोषयुक्त नहीं बन जाते हैं।

686. दान का फल वस्तु के आधार पर नहीं, किंतु आपकी वृत्ति के आधार पर है। क्या दिया ? यह महत्त्व की वस्तु नहीं है, किंतु किस भाव से दिया-यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

687. आरोग्य प्राप्ति के लिए सिर्फ दवाई का सेवन ही पर्याप्त नहीं है, उसके साथ अपथ्य का त्याग भी जरुरी है। धर्मी बनने के लिए धर्म का सेवन ही पर्याप्त नहीं है, इसके साथ ही पाप का त्याग भी जरुरी है।

688. धर्म का प्रत्यक्ष फल है-संतोष। उसके परिणाम स्वरुप समाधि और सद्गति अत्यंत ही सुलभ है।

689. संसार के क्षेत्र में सफलता का आधार पुण्य का उदय है, जबकि धर्म के क्षेत्र में सफलता का आधार पुरुषार्थ ही है। ज्यों ज्यों जीवन में पुरुषार्थ बढ़ेगा, त्यों त्यों जीवन अधिक धर्ममय बन सकेगा।

690. आज शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जा रहा है और संस्कारों की संपूर्ण उपेक्षा की जा रही है ।

691. दुनिया में अच्छे आदमी ब्रेक अथवा स्पीडब्रेकर का काम करते हैं, जो बुराई को रोक देते हैं अथवा उसकी स्पीड घटा देते हैं ।

692. टूटे हुए टेबल को पैसा खर्च कर जोड़ सकोगे परन्तु जो दिल टूट गया, उसे जोड़ना अत्यंत ही कठिन है ।

693. शुभ कार्य में देर न करें, अशुभ कार्य शीघ्र न करें ।

694. बड़े व्यक्ति को अपने घर बुलाना हो तो घर स्वच्छ होना जरुरी है तो मन में प्रभु को प्रतिष्ठित करना हो तो उसकी पवित्रता जरुरी नहीं ?

695. नींव बिना इमारत अल्पजीवी है, उसी प्रकार विनय बिना गुणों की इमारत भी अल्पजीवी ही रहनेवाली है ।

696. पत्थर पर फूल नहीं उगते, उसी प्रकार कृतघ्न व्यक्ति के हृदय में गुणों का बीजाधान नहीं हो सकता ।

697. संपत्ति का अभाव व्यक्ति को दुःखी कर सकता है, परंतु विवेक का अभाव व्यक्ति को पापी बना देता है ।

698. दुर्जनों की संगति में सज्जन बने रहना अत्यंत ही कठिन कार्य है ।

699. माता-पिता को संतान के प्रति प्रेम वर्तमान जीवन की दुःख मुक्ति तक सीमित होता है, जब कि गुरु का प्रेम शिष्य को पाप-मुक्त बनाने तक अमर्यादित होता है ।

700. कृपणता से भी अधिक खतरनाक कृतघ्नता है ।

701. कृतघ्नता अर्थात् उपकारी के उपकार को भूल जाना ।

702. कृतज्ञता से जीवन में नम्रता का विकास होता है, जबकि कृतघ्नता से अहंकार पुष्ट होता है ।

703. कर्म से मलिन आत्मा मलिन वस्त्र के समान है, पंच परमेष्ठी पानी तुल्य व ज्ञानादि चार साबुन तुल्य हैं ।

704. धन आदि की आसक्ति से भी देव-गुरु की आशातना का पाप अति भयंकर है ।

705. सिंह चाहे जितनी हिंसा करे तो भी चौथी नरक में ही जा सकता है, जबकि मनुष्य लेश भी हिंसा न करे तो भी मन के पापों के द्वारा 7वीं नरक में जा सकता है ।

706. Liftman ऊपरवाले को नीचे और नीचेवाले को ऊपर ले जाता है । मनुष्य को मिला मन भी Liftman हैं जो मानव को ऊपर व नीचे ले जा सकता है ।

707. लोहे की मजबूत बेड़ियों से भी मन को बाँध नही सकते हैं, जबकि स्नेह के कच्चे तंतु से भी मन जुड जाता है ।

708. चार ज्ञान के धनी होने पर भी तीर्थंकर परमात्मा अपने छद्मस्थ काल में मौन ही रहते है ।

709. नदी की रेती से घडा नहीं बन सकता, उसी प्रकार अभव्य आत्मा का कभी मोक्ष नहीं हो सकता है ।

710. तीर्थंकर परमात्मा केवलज्ञान की प्राप्ति के बाद शासन की स्थापना करते है, परंतु प्रभु का शासन तो श्रुतज्ञान के बल पर ही चलता है ।

711. जैन शासन की आधार शिला श्रुत ज्ञान ही है ।

712. साधु की भाँति श्रावक को भी दिन में 7 बार चैत्यवंदन करना चाहिये । तीन बार मंदिर में और चार बार सुबह-शाम प्रतिक्रमण में ।

713. उपधान तप में पंचाचार का पालन एवं रत्नत्रयी की आराधना-साधना होती है ।

714. पहले व्यवहारिक शिक्षण कम था, लोग श्रद्धाजीवी थे, आज व्यवहारिक शिक्षण बढा, लोग बुद्धिजीवी बने ।

715. भगवान को माननेवाले बहुत हैं, परंतु भगवान के स्वरुप को पहिचाननेवाले बहुत कम है ।

716. परमात्मा की सबसे बडी विशेषता है, कि उन्होंने जगत् के यथार्थ स्वरुप का वर्णन किया है ।

717. व्यवहार से ज्ञान की प्राप्ति सद्गुरु से और उनकी कृपा से होती है । निश्चय से भीतर रहा ज्ञान बाहर प्रकट होता है ।

718. प्रभु नवतत्त्व के उपदेशक है, इसलिए उनने नौ अंगों की पूजा की जाती है ।

719. भूतकाल में अपनी आत्मा ने जितना कष्ट सहन किया है, उसका अनंतवां भाग भी हमने आत्मा के लिए सहन किया होता तो अपनी आत्मा का अवश्य मोक्ष हो जाता ।

720. भूल जाना भी एक गुण है । दूसरों की भूलों को भूल जाना सबसे बड़ा गुण है ।

721. नाव में छेद होता है तो पानी अंदर आता है, उसी प्रकार मिथ्यात्व आदि छिद्रों के द्वारा आत्मा में कर्म का प्रवेश होता है ।

722. सौधर्म इन्द्र प्रभु के सामने बैल बनकर अभिषेक कर यह बताना चाहते है कि हे प्रभु ! मैं आपके आगे बैल जैसा हूँ ।

723. अतिक्रम, व्यतिक्रम और अतिचार तक लगे दोषों की शुद्धि प्रतिक्रमण द्वारा कर सकते हैं ।

724. अंगार व धूम्र दोष, 42 दोषों से रहित निर्दोष गोचरी को भी दूषित कर देते है ।

725. 1000 वर्ष तक दीक्षा पालन के बाद भी कंडरिक मुनि आहार की आसक्ति के कारण भग्न परिणामवाले हो गए ।

726. तप साधना के लिए कायबल की अपेक्षा मनोबल खूब जरुरी है ।

727. पर्युषण पर्व की सफलता क्षमापना के आधार पर है ।

728. संसार की हर वस्तु के साथ भय जुडा हुआ है । एक मात्र विरक्त आत्मा ही निर्भय है ।

729. भावि गति को सुधारना हो तो कम से कम 12 तिथि 10 तिथि या 5 तिथि के दिन विशेष धर्म आराधना करनी चाहिये ।

730. अपने कषाय अनंतानुबंधी न हो इसके लिए संवत्सरी प्रतिक्रमण अनिवार्य है ।

731. समुद्र अपनी मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता है, सूर्य आग के गोले की तरह नहीं बरसता हैं, यह सब धर्म का ही प्रत्यक्ष फल है ।

732. साधु के उपदेश का असर होता है, उसका कारण वाक् चातुर्य नहीं, बल्कि आचार पालन है ।

733. गरीब साधर्मिक भी दया पात्र नहीं, किंतु भक्ति पात्र ही है ।

734. अकाल मृत्यु भी वैराग्य का प्रबल निमित्त है ।

735. सचित्त जल व सचित्त वस्तु कामवर्धक है ।

736. धन में आसक्त को दान धर्म का, भोग में आसक्त को शील धर्म का, आहार में आसक्त को तप धर्म का उपदेश लाभदायी होता है ।

737. माता, बहिन व पुत्री ये तीन संबंध पुरुष के लिए पवित्र कहलाते है ।

738. दुनिया धन में सुख मानती है, अतः धन प्राप्ति के मार्ग पर दौडती है । प्रभु का शासन त्याग में सुख मानता हैं, अतः भोग के त्याग का और धन के दान का उपदेश देता है ।

739. डॉक्टर के कहने से दूध-घी-शक्कर आदि छोडा जाता है, वह त्याग नहीं कहलाता है, क्योंकि उसमें छोडने की मजबूरी है ।

740. भोग की शक्ति और सामर्थ्य होने पर भी जो त्याग करता है, वास्तव में वो ही सच्चा त्यागी कहलाता है ।

741. जब कुत्ता रोटी को पकडता हैं, तो अन्य कुत्ते उस पर टूट पडते हैं, परंतु ज्योंहि वह रोटी छोड देता हैं, सभी कुत्ते उसे छोड देते है । जो धन को पकडता है, उस पर सभी आपत्तियाँ टूट पडती है, परंतु जो धन को छोड देता है, सारी आपत्तियाँ दूर हो जाती है ।

742. हड्डी को चबाते समय कुत्ते को यह भ्रम होता है कि मुझे हड्डी से कुछ स्वाद मिल रहा है ।

743. विरति की खूब महिमा है । इन्द्र भी विरतिधर को प्रणाम करके ही इन्द्र सभा में बैठते है ।

744. नवकार में धनवान् को नमस्कार नहीं है, परंतु धन के त्यागी को ही नमस्कार है ।

745. दो भाई दुकान में साथ में रह सकते हैं, परंतु दोनों के घर-रसोड़े अलग-अलग हो जाते हैं । झगड़े का मूल स्त्री है ।

746. चारित्र के अंतराय को तोड़ने के लिए ऋषभदेव प्रभु की पुत्री सुंदरी ने 60000 वर्ष तक अखंड आयंबिल किए थे ।

747. विष तो खाने पर ही मारता है, जबकि विषयों का स्मरण भी आत्मा का पतन कराता है ।

748. लक्ष्मी चंचल हैं, वह जीवन पर्यांत साथ देगी ही, ऐसी कोई गारंटी नहीं है ।

749. पाप पहले मन में पैदा होता हैं, फिर वचन और काया में आता है ।

750. पत्थर पर फूल नहीं उगते, उसी प्रकार कृतघ्न व्यक्ति के ह्रदय में गुणों का बीजाधान नहीं हो सकता ।

751. संपत्ति का अभाव व्यक्ति को दुःखी कर सकता है, परंतु विवेक का अभाव व्यक्ति को पापी बना देता है ।

752. दुर्जनों की संगति में सज्जन बने रहना अत्यंत ही कठिन कार्य है ।

753. माता-पिता को संतान के प्रति प्रेम वर्तमान जीवन की दुःख मुक्ति तक सीमित होता है, जब कि गुरु का प्रेम शिष्य को पाप-मुक्त बनाने तक अमर्यादित होता है ।

754. कृपणता से भी अधिक खतरनाक कृतघ्नता है ।

755. कृतघ्नता अर्थात् उपकारी के उपकार को भूल जाना ।

756. कृतज्ञता से जीवन में नम्रता का विकास होता है, जबकि कृतघ्नता से अहंकार पुष्ट होता है ।

757. कर्म से मलिन आत्मा मलिन वस्त्र के समान है, पंच परमेष्ठी पानी तुल्य व ज्ञानादि चार साबुन तुल्य हैं ।

758. धन आदि की आसक्ति से भी देव-गुरु की आशातना का पाप अति भयंकर है ।

759. रुप और कुल से व्यक्ति महान् नहीं बनता है, व्यक्ति अपने कर्म से ही महान् बनता है ।

760. उबलते हुए पानी में प्रतिबिंब दिखाई नहीं देता है, उसी प्रकार क्रोधी व्यक्ति अपना हित नहीं समझ पाता है ।

761. आज के सूर्य को आगामी कल के बादल के पीछे छुपा देना, उसी का नाम चिंता है ।

762. जिंदगी फूलों की शय्या नहीं किंतु युद्ध का मैदान है ।

763. हीरे को घिसने पर ही उसका तेज प्रगट होता है, उसी प्रकार कसौटी में से प्रसार होने पर ही व्यक्ति पूर्ण बनता है ।

764. दुर्जन की अपेक्षा सर्प अच्छा है, सर्प कभी-कभी डंक देता है, जब कि दुर्जन कदम-कदम पर काटता रहता है ।

765. किसी की भूल निकालना सरल है, किसी को सुधारना कठिन है ।

766. धन द्वारा दो वस्तुएँ खरीदी जाती हैं-भय और दुःख ।

767. जिसके जीवन का लक्ष्य निर्धारित नहीं होता है, उसी को समय प्रसार करने के लिए साधन शोधने पड़ते हैं ।

768. ध्येयहीन जीवन नाविक बिना की नाव समान है ।

769. अश्लील पुस्तकें पढ़ना विषपान समान है ।

770. अच्छी पुस्तकों से रहित घर श्मशान जैसा है ।

771. जो हार से घबराता है, उसकी निश्चित हार है ।

772. भय हमेशा अज्ञान में से उत्पन्न होता है ।

773. अच्छे व्यक्ति मजाक में भी जो बोलते हैं, वे वचन शिलालेख समान होते हैं, जब कि दुर्जन व्यक्ति सौगन्ध खाकर भी बोलेगा तो भी उसके वचन जल की रेखा समान ही होंगे ।

774. मित्र ढाल समान होना चाहिए, जो सुख में पीछे व दुःख में आगे रहता है ।

775. भाषण चांदी है तो मौन स्वर्ण है ।

776. मौन व एकांत आत्मा के श्रेष्ठ मित्र हैं ।

777. मौन सर्वोत्तम भाषण है, बोलना ही पड़े तो कम-से-कम बोलें ।

778. क्रोध को जीतने के लिए मौन श्रेष्ठ उपाय है ।

779. भय से मौन पशुता है, संयम से मौन साधुता है ।

780. विद्या से विनय प्राप्त होता है और विनय से योग्यता प्राप्त होती है ।

781. ड्राइवर हो तो गाडी आगे चल सकती हैं, उसी प्रकार आत्मा रुपी ड्राइवर हो तो शरीर की गाडी चल सकती है ।

782. सत्ता के सिंहासन पर बैठना आसान हैं, परंतु प्रजा के दिल में बैठना कठिन है ।

783. मंथरा आज भी जीवित है, सिर्फ उसका स्वरुप बदल गया है ।

784. नायक Leader में भीम और कांत दोनों गुण होने आवश्यक है ।

785. वृक्ष की छाया वृक्ष को छोड कभी अलग नहीं रहती, पतिव्रता नारी पति को छोड कभी अलग नहीं रहती । वह पति के सुख में सुखी और पति के दुःख में दुःखी होती है ।

786. कुमारपाल महाराजा के समय जैन शासन का सूर्य मध्याह्न में तप रहा था ।

787. सिद्ध भगवंतों को छोडकर चौदह राजलोक में रहे सभी जीवों पर मृत्यु का एक छत्री शासन है ।

788. जो जन्मे हैं, वे मृत्यु से बच नहीं सकते हैं, मृत्यु से बचना है तो अजन्मा बन जाना चाहिये ।

789. मृत्यु समय संलेखना द्वारा देह और कषायों का शोषण करने का है ।

790. जीवन में की गई आराधना का फल समाधि मरण हैं ।

791. अंतिम समय में निर्यामणा कोई भी करा सकता है-चाहे छोटा हो या बडा ।

792. जन्म समय जो पीडा होती है, उससे अनेक गुनी अधिक 'पीडा मृत्यु के समय होती है ।'

793. केश लोच अर्थात् मृत्यु के समय होनेवाली पीडा का अभ्यास ।

794. इच्छाएँ आकाश के समान अनंत हैं । इच्छाओं की पूर्ति से नहीं, इच्छाओं के निरोध से ही सुख की प्राप्ति हो सकती है ।

795. सुख बाह्य भौतिक पदार्थों में नहीं है । अतः सुखप्राप्ति के लिए बाह्य पदार्थों की खोज न करें, सुख तो आत्मा के भीतर रहा हुआ है ।

796. यदि तुम दूसरों का भला चाहोगे तो तुम्हारा भी भला होगा। यदि तुम दूसरों का बुरा चाहोगे तो तुम्हारा ही बुरा होगा।

797. जो स्वार्थी होता है, वह सिर्फ अपने ही सुख-दुःख का विचार करता है। स्वार्थी व्यक्ति का कभी मोक्ष नहीं होता।

798. काम, क्रोध और लोभ आत्मा के भयंकर शत्रु हैं। इन शत्रुओं का नाश किए बिना आत्मा का कल्याण शक्त नहीं है।

799. ब्रह्मचर्य का पालन सर्वश्रेष्ठ तप है। निर्मल ब्रह्मचारी को देवता भी नमस्कार करते हैं।

800. कभी कठोर शब्द न बोलें। कटुवाणी के प्रहार से सामनेवाले का हृदय बिंध जाता है।

801. किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो। सभी प्राणी जीना चाहते हैं, मरना किसी को पसंद नहीं है।

802. क्रोध करने से विवेक नष्ट हो जाता है। अविवेकी व्यक्ति कुछ भी गलत काम कर सकता है।

803. अपने उपकारी के उपकार को जो भूल जाता है, वह कृतघ्न कहलाता है। कृतघ्न व्यक्ति अपने आत्मविकास को रोक देता है।

804. प्रमाद ही मृत्यु है, आत्म-जागृति ही जीवन है।

805. सत्कर्म करने के बाद फल की इच्छा कभी नहीं करनी चाहिए। जो फल की अपेक्षा रखता है, वह सत्कर्म के वास्तविक फल को खो देता है।

806. तप का ध्येय काया का शोषण नहीं होना चाहिए। बल्कि काया की ममता का त्याग और रसना जप होना चाहिए।

807. हृदय में माया-कपट न करें। जो मायावी होता है, वह सर्प की तरह सदैव अविश्वसनीय हो जाता है।

808. पैसा सुख की सामग्री देता है, परंतु सुख देने की गारंटी नहीं देता है।

809. पुण्य का उदय हो तब प्रतिकूल सामग्री भी अनुकूल बन जाती है और पाप का उदय हो तब अनुकूल सामग्री भी प्रतिकूल बन जाती है।

पालीताणा-उपधान में प्रवचन-वर्षा

810. अनाथाश्रम व वृद्धाश्रम में अन्य सब कुछ मिल सकता हैं, परंतु पिता का प्रेम और माँ का वात्सल्य नहीं मिल सकता हैं ।

811. अनाथ बालक की मानसिक वेदना को तो वह स्वंह ही समझ सकता है। **पूज्य हरिभद्रसूरिजी म.** जिनागमों के अभाव में अपने आपको `अनाथ' महसूस करते है ।

812. अपनी आत्मा का अधिकांश भूतकाल चार गतियों में से तिर्यंच गति में, तिर्यंच गति में भी एकेन्द्रिय में, एकेन्द्रिय में भी वनस्पतिकाय में और वनस्पतिकाय में भी साधारण वनस्पतिकाय में व्यतीत हुआ है ।

813. संसार में शादी के प्रसंग पर आग के चारों ओर प्रदक्षिणा दी जाती है, इसका अर्थ हैं कि अब जींदगी-भर आग में ही तपना है ।

उपधान में प्रवेश के समय भगवान के चारों ओर प्रदक्षिणा दी हैं, अतः अब प्रभु से नाता-रिश्ता जोडा है ।

814. अनुकूलता का तीव्र राग और प्रतिकूलता का तीव्र द्वेष आत्मा में अनादि काल से रहा हुआ है, उस राग द्वेष को तोडने के लिए ही संयम की साधना है ।

815. गजसुकुमाल महा मुनि को गृहस्थ जीवन में सब कुछ अनुकूलताएँ थी परंतु उन्होंने प्रयत्न द्वारा अनुकूलता के राग को तोडा तो मात्र एक ही दिन के चारित्र द्वारा सभी घाति कर्मों का क्षय कर दिया था ।

816. `समतालय' (मकान का नाम) में रहते हुए अपने जीवन में समता भाव को आत्मसात् करना है ।

817. जैन शासन में गुरु तत्व का कितना अधिक बहुमान है ! हम जो `खमासमणा' अरिहंत परमात्मा को देते हैं, वही `खमासमणा' गुरु भगवंत को भी देते है ।

818. उपधान और छ'री पालक संघ के माध्यम से साधु जीवन की ट्रेनिंग मिलती है ।

819. गुरु से नीचे आसन पर बैठने से वह व्याख्यान जीवन में उतरता है । समान आसन या कुर्सी पर बैठने से थोडा अविनय होता है ।

820. अपवाद का सेवन भी उत्सर्ग के पालन के लिए है । संयोगवश अपवाद का सेवन करना पडे तो भी पुनः शीघ्र उत्सर्ग मार्ग पर आने का प्रयत्न होना चाहिए ।

821. राणकपूर मंदिर में 1444 स्तंभ है । कुमारपाल ने 1440 जिन मंदिर बनवाए । हरिभद्रसूरिजी ने 1444 ग्रंथों का सर्जन किया ।

822. दुनिया में पानी व नमक भी मुफ्त में नहीं मिलता है । जब कि साधु को जीवन निर्वाह की सभी सामग्री 'धर्मलाभ' कहने से मिल जाती है ।

823. परिषह और उपसर्गों को समता-समाधिपूर्वक सहन करने से अपूर्व कर्म निर्जरा होती है ।

824. सारी दुनिया भौतिक सुखों के पीछे भागती है, जबकि प्रभु का शासन प्राप्त सुखों को भी छोडने की ही बात करता है ।

825. उपधान और छ'री पालक संघ में साधु जीवन का आस्वाद है ।

सम्यग् दर्शन पद

826. दर्शन ज्ञान व चारित्र को रत्नत्रयी कहा है, तथा देव, गुरु और धर्म को तत्वत्रयी कहा है । देव से दर्शन, गुरु से ज्ञान और धर्म से चारित्र प्राप्त होता है । अर्थात् तत्वत्रयी से रत्नत्रयी की प्राप्ति होती है ।

827. सम्यग् दर्शन के अभाव में 9½ पूर्व का ज्ञान और निरतिचार चारित्र भी अज्ञान और काय कष्ट कहा है ।

828. आज से लगभग 800 वर्ष पूर्व शांतिसूरीश्वरजी म.सा. ने एक अमूल्य ग्रन्थ की रचना की है। ग्रन्ध के उपर टीका की भी रचना इन्होंने ही की है।

829. मूल सूत्र प्राकृत भाषा में है।

830. आवश्यक सूत्र में अधिकांश सूत्र प्राकृत भाषा में है, कुछ सूत्र संस्कृत भाषा में है, कुछ सूत्र में थोडी गाथाएं संस्कृत और थोडी गाथाएं प्राकृत में भी है।

831. संसारदावानल स्तुति एक ऐसी रचना है, जिसको संस्कृत से अर्थ करे या प्राकृत से अर्थ करे तो भी अर्थ में कोई भेद नहीं आएगा।

832. Muslims की कुरान ऊर्दू भाषा में, Chirstains की Bible English में हिन्दु के गीता आदि संस्कृत में, परंतु जैन साहित्य ही प्राकृत भाषा में प्राप्त हो सकता है, बाकी किसी भी धर्म का कोई भी ग्रन्थ प्राकृत में नहीं।

833. संतानहीन व्यक्ति को चाहे दूसरे कितने ही सुख क्यों न हो, वो अन्दर से दुःखी होता है।

अधिक संतान हो, परंतु पैसे न हो तो वे भी दुःखी है।

संतान होने पर भी आज्ञा पालन नहीं करते हो-तो वे भी दुःखी ही है।

834. संसार मे कोई भी व्यक्ति पूरी तरह से सुखी हो, यह संभव ही नहीं है।

835. प्रवचन के प्रारंभ में भी मंगल है और अंत में भी मंगल है।

836. नवकार महामंत्र में चारों मंगलों का समावेश है। अरिहंत, सिद्ध, साधु और धर्म। धर्म का समावेश कैसे ? धर्म हमेशा धर्मी में होता है। आचार्य, उपाध्याय व साधु के पास पूर्ण धर्म है। सर्व विरति रुप धर्म है। जो व्यवहार नय से है।

837. अरिहंत और सिद्धों के पास क्षायिक भाव का धर्म है, जो निश्चय नय से है ।

838. Doctor के पास नम्र बनने से रोग जाता है, Lawyer के पास नम्र बनने से विवाद टल जाता है, धनवान के पास नम्र बनने से धन प्राप्त होता है, तो फिर अरिहंतादि पंच परमेष्टि के आगे नम्र बनने वाले व्यक्ति को क्या प्राप्त नहीं होगा ?

839. हमे देव के पास जाना हैं, भगवान बनने के लिए और गुरु के पास जाना हैं, साधु बनने के लिए । इसके अलावा किसी भी उद्देश्य से हमे उनके पास नहीं जाना हैं ।

840. आज भगवान के भक्त कम और ठग भक्त ज्यादा हैं ।

भगवान का सच्चा भक्त कौन ? जो भगवान ने पाया है, वो पाने की इच्छा रखता हो और जो प्रभु ने छोडा है, वह छोडने की इच्छा करता हो ।

हमारा जीवन इससे विपरीत हैं । हमें तो, भगवान ने जो छोडा, उसका ज्यादा आकर्षण हैं ।

841. भूखे को भोजन देने से 2-4 घंटे या 1 दिन की शांति होगी, प्यासे को पानी पिलाने से 1-2 घंटे की शांति होगी, मकान रहित को मकान देने से मकान के अस्तित्व तक शांति होगी, ये सारी शांति अस्थायी है ।

842. भगवान ने द्रव्य दारिद्र्य मिटाने के लिए एक साल तक रोज 1 करोड 8 लाख सोना मुहार का, कुल 3,88 करोड 80 लाख का दान दिया । फिर भी भगवान जानते थे कि इस दान से सिर्फ अस्थायी सुख मिलेगा ।

843. भगवान ने जगत के भाव `दारिद्र्य' को नष्ट करने के लिए धर्म बताया है ।

844. प्रतिकूल संयोगों में भी जो समता भाव नहीं छोडता हैं, वही सच्चा श्रमण कहलाता है ।

845. रोटी, कपडा और मकान से प्राप्त होने वाला सुख अस्थायी हैं, जब कि धर्म से प्राप्त होनेवाला सुख स्थायी है ।

846. दीक्षा लेने के बाद छद्मस्थ काल में भगवान अभय दान करते हैं। इसके अलावा गृहस्थ अवस्था में वार्षिक दान और केवलज्ञान के बाद ज्ञान दान करते हैं ।

847. दरिद्रता 2 प्रकार की है द्रव्य और भाव । द्रव्य दरिद्रता से थोडा नुकसान होगा, जबकि भाव दरिद्रता से बहुत बडा नुकसान होगा ।

848. कल्याण मंदिर के द्वारा हम भगवान को प्रार्थना करते हैं कि आज तक मैंने अनेक बार आपको देखा हैं, सुना हैं, पूजन किया हैं, परंतु मन आपको नहीं सौंपने के कारण आज तक संसार में भटक रहा हूँ ।

849. आज जो कुछ भी भगवान के धर्म की आराधना हो रही है, तो उसमे देव, गुरु और धर्म ही कारण हैं, हम में कोई ताकत नहीं कि हम आराधना कर सके ।

850. ग्रन्थकार महर्षि भी ग्रन्थ का प्रारंभ करने के पूर्व मंगलाचरण करते हुए कहते हैं कि त्रिभुवन को जानने वाले, गुण रुपी रत्नों के महासागर ऐसे तीर्थंकर महावीर देव को नमस्कार हो ।

851. धर्मरत्न के योग्य कौन ? 21 गुणधारी आत्मा ।

ज्ञानपद

852. तीर्थंकर भगवान के श्रीमुख से `उप्पन्नेइवा-विगमेइवा धुवेइ वा' रुप त्रिपदी का श्रवण कर गणधर भगवंत 14 पूर्वो की रचना करते हैं ।

853. गणधर भगवंत बीज बुद्धि के निधान कहलाते हैं ! तीर्थंकर भगवान के

बाद में उनका पुण्य सर्वाधिक होता है । सर्वार्थ सिद्ध विमानवासी देवताओं के पुण्य से भी ज्यादा पुण्यशाली गणधर होते हैं । वे जिस दिन दीक्षा धर्म का स्वीकार करते है, उसी दिन वे आचार्य पद पर स्थापित होते है ।

854. तीर्थंकर भगवान दूसरे प्रहर में देवछंदा में आराम करते हैं, तब उनकी पादपीठ पर बैठकर गणधर भगवान देशना देते हैं ।

855. भगवान की वाणी को सूत्र के रुप में रचना करने का काम गणधर भगवंत करते हैं ।

856. वर्तमान का जो ज्ञान है वह ज्ञान, गणधर भगवंतों के द्वारा रचित द्वाद्वशांगी रुप समुद्र के आगे बुन्द जितना भी नहीं है । 14 पूर्व तो क्या, 1 पूर्व से भी तुलना नहीं कर सकते हैं ।

857. पदार्थ का विवेचन केवलज्ञानी जिस ढंग से करे, उसी तरह वही विवेचन 14 पूर्व के ज्ञाता श्रुत केवली भी कर सकते है ।

858. इस काल में सूत्र-अर्थ की अपेक्षा से अंतिम 14 पूर्वी भद्रबाहु स्वामिजी और सूत्र की अपेक्षा से स्थुलभद्र महामुनि थे ।

859. स्थुलभद्र महामुनि की 7 बहने जक्षा आदि के ज्ञान का क्षयोपक्षम ऐसा था वे एक बार, दो बार...क्रमशः 7बार सुने तो उन्हें याद रह जाता था ।

860. पहले श्रुत का आदान-प्रदान मौखिक ही होता था-परंतु कालक्रम से ज्ञान की हानि के कारण श्रुत नष्ट होता गया । इस परिस्थिति के कारण देवर्धिगणी श्रमाश्रमण ने 500 आचार्यो को सम्मिलित करके वल्लभीपुर तीर्थ में 1 करोड ग्रन्थों को लेखनीबद्ध करवाया । यह कार्य 13 वर्षों तक चला ।

861. आज उन 1 करोड ग्रन्थ में से 15000 ग्रन्थ भी उपलब्ध नहीं हैं। उनमें भी कुछ ग्रन्थ ऐसे है, जिनकी दूसरी प्रति (copy) भी नहीं है।

862. भगवान महावीर का शासन 21000 वर्ष तक चलेगा, उसमें से 2541 वर्ष ही बीते हैं, अभी तो और 18439 वर्ष बाकी है। इतने काल तक शासन श्रुत ज्ञान के आधार पर ही चलेगा।

863. देवर्धिगणी श्रमाश्रमण वे ही हैं, जिन्होंने भगवान का गर्भ देवानंदा की कुक्षि से त्रिशला माता की कुक्षि में स्थापित किया था।

864. संसार के सुख कैसे ? मरुभूमि में गर्म हवा के कारण दुर से पानी लगता है, वैसा ही संसार का सुख है।

865. इस पाँचवे आरे का नाम दूषम काल है-दुःख काल है, ऐसे दुःख में भी जीवों को वैराग्य नहीं होता।

866. भगवान ने कहा है कि संसार में भटकती हुई आत्माओं को मनुष्य भव मिलना अति दुर्लभ है। एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और तिर्यंच-नरक पंचेन्द्रिय में खूब खूब दुःख सहन करने के बाद मनुष्य भव प्राप्त होता हैं।

867. एकेन्द्रियादि भवों में मार खाते-खाते नदी-गोल पाषाण न्याय से अकाम निर्जरा करते हुए जीव को मनुष्य भव प्राप्त होता है।

मनुष्य भव की प्राप्ति के बाद भी जिनवाणी का श्रवण अति दुर्लभ है।

868. मंदिर मार्गी लोगों ने भगवान की पूजा को पकड़ी और गुरु की वाणी को छोड दिया, स्थानकवासियों ने भगवान की पूजा छोडी, गुरु वाणी को पकडा। दोनो निष्फल जाते हैं। मोक्षमार्ग में आगे बढने के लिए देव और गुरु दोनों की जरुरत है। जैसे रथ के दो पहिये, वैसे ही मोक्षमार्ग के लिए देव-गुरु है।

869. 12 वीं सदी में हुए शांतिसूरिजी म.सा. ने हमारे आत्म कल्याण के लिए धर्मरत्न प्रकरण की रचना की है ।

870. मनुष्य भव तो भील, आदिवासी, कसाई आदि करोडों को मिला है, परंतु उनके पास धर्म नहीं हैं ।

871. मनुष्य भव के बाद पाँच इन्द्रिय परिपूर्ण मिलना अति दुर्लभ है । धर्म श्रवण के लिए कान जरुरी है, जीवदया आदि पालन, वैयावच्च आदि कार्य के लिए आँख भी जरुरी है ।

872. श्रावकों के लिए ज्ञान प्राप्ति के सिर्फ दो साधन 1) जिनवाणी और 2) स्वाध्याय ।

873. जिनवाणी के श्रवण के बाद उस जिनवाणी पर पूर्ण विशास (श्रद्धा) होना अति कठिन है ।

874. श्रद्धा से भी आचरण करना अतिदुर्लभ है ।

875. जिस प्रकार सिंह का दूध सोने के पात्र में ही रह सकता है, उसी तरह भगवान का धर्म योग्य आत्मा में ही रह सकता है ।

876. गरीब के घर पर चिन्तामणी रत्न दुर्लभ है । चिन्तामणि रत्न प्राप्त करना आसान है, परंतु धर्म रुपी रत्न प्राप्त करना तो अत्यंत कठिन है ।

877. चिन्तामणी रत्न से जो मांगो वह मिलता है, परंतु उसकी प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ है ।

878. उपवास-अपना घर है, आयंबिल मित्र का घर है, विगई शत्रु का घर है ।

879. मोक्ष में हमेशा के लिए उपवास हैं, आत्मा को कर्म का बंधन नहीं होने के कारण शरीर नहीं है, इसलिए भोजन की जरुरत भी नही हैं ।

चारित्रपद

880. जन्म से जैन बनना अलग बात है और कर्म से जैन बनना अलग बात है। कर्म से जैन बनने के लिए धर्म में प्रयत्न जरुरी है।

881. जन्म से जैन बनने के लिए जो पुण्य चाहिए, उससे ज्यादा पुण्य, कर्म से जैन बनने के लिए चाहिए।

882. मात्र जैन कुल में जन्म लेने से जैन नहीं बनते है। जैन धर्म तो एक आचार संहिता है, जो उसका पालन करे, वह व्यक्ति जैन कहलाता है।

883. मानव जन्म, आत्मा से परमात्मा बनने के लिए मिला है।

884. मानव का जन्म पाने के लिए उल्टे मस्तक 9 महिने गर्भ की कैद सहन करनी पडती है। मनपसन्द भोजन नहीं, परंतु माँ का ऐंठा-झूठा, गंदगी के बीच रहना, फिर भी ऐसे मानव जीवन की भगवान ने प्रशंसा की है।

885. मानव के शरीर मे 3.5 करोड रोंगटे है, 1-1 रोंगटे में 1¾ रोग सत्ता में है। कब कौन-सा रोग शरीर पर हावी होगा पता नहीं है।

886. मानव शरीर के अंदर गंदगी भरी हुई हैं। उसके समीप में आने वाली वस्तु चाहे जितनी कीमती और अच्छी क्यों न हो, वह गंदी हो जाती है।

887. गाय-घास खाकर दूध देती है, मानव अच्छी से अच्छी वस्तु खाता है, परंतु विष्टा देता है। ऐसी गंदगी, जिसके सामने देखना भी पसंद नहीं है।

888. दुनिया के कारखानों में Raw Material, Third Class परंतु Production, First Class होता है। हमारे शरीर रुपी कारखानें में Raw Material-First Class और Production-Third Class होता है।

889. गाय के पाँच गव्य दुध, दही, घी, मुत्र, विष्ठा, ये पांचों वस्तु उपयोगी है ।

890. गाय का गोबर कितना उपयोगी है ! 1) रसोई बनाने के लिए उसे जलाया जाता है । 2) बाटें को पकाने के लिए भी काम आता है ।

उसकी राख 1) बर्तन मांजने में 2) चींटी आदि से रक्षा करने में । 3) अनाज के रक्षण में । 4) गंदगी को दूर करने के लिए । व 5) साधु-साध्वी के लोच में भी काम आती है ।

891. मनुष्य जीवन की कीमत जब तक प्राण हो, तब तक । प्राण जाने के बाद शव को रखने के लिए कोई तैयार नहीं ।

892. मानव का आयुष्य भी क्षण भंगूर है । किस समय किसकी मौत होगी, कुछ कह नहीं सकते ।

893. झाड़ पर रहा सुखा पत्ता कभी भी झड़ सकता है, वैसे ही मानव का आयुष्य कभी भी पूरा हो सकता है ।

894. मानव का आयुष्य क्षण भंगूर है, शरीर रोगों से भरा है, फिर भी शास्त्रकारोंने मनुष्य भव की प्रशंसा की है ।

895. देव भव में जन्म-समय कोई पीडा नहीं, वैक्रिय शरीर होने से क्षण में युवावस्था समान शरीर बन जाता हैं, जन्म से ही 3 ज्ञान, रोग का नामोनिशान नहीं । किसी प्रकार की अशुचि नहीं है । फिर भी भगवान ने देव-भव की प्रशंसा नहीं की है ।

896. मनुष्य के लिए शुभ गति अर्थात् मोक्ष और देव । वर्तमान में यहाँ से मोक्ष संभव नहीं, इसलिए देव भव एक Halt है ।

897. मोक्ष में जाने के लिए वज्र ऋषभ नाराच संघयण ही चाहिए, शुक्लध्यान ही चाहिए, क्षपक श्रेणी भी चाहिए ।

898. क्षपकश्रेणी अर्थात् कर्मों को जड मूल से नष्ट करने की प्रक्रिया ।

899. अंतिम केवली जंबुस्वामी के निर्वाण के बाद 10 वस्तुओं का विच्छेद हो गया । नष्ट उसमें क्षपक श्रेणी व क्षायिक सम्यकत्व का भी विच्छेद हो गया है ।

900. बुढापा आने पर मानव शरीर में कुदरती परिवर्तन चालू हो जाता है । काले बाल सफेद होने लगते है, दांत गिरने लगते है, शरीर कमजोर होने लगता है । चलना मुश्किल हो जाता है और काया रोग से घिरने लगती है ।

901. देव की गति कितनी ? क्षण भर में जहाँ चाहे वहाँ आ-जा सकता है । कोई अवरोध नहीं ।

जंबूद्वीप में रहे सोने-चांदी रत्न को इकट्ठा कर दे, तो भी उसकी तुलना उनके पैर की एक मोजडी के एक रत्न से भी नहीं हो सकती ।

902. धर्म की प्राप्ति के लिए मनुष्य जन्म जरुरी है ।

903. 14 गुणस्थानकों मे से देवता सिर्फ चौथे गुणस्थानक तक जा सकते हैं ।

904. देवता और नारक को ज्यादा से ज्यादा चौथा गुणस्थानक । तिर्यंच ज्यादा से ज्यादा 5 वें गुणस्थानक को प्राप्त कर सकते है । सिर्फ मनुष्य ही 14 गुणस्थानक को प्राप्त कर सकता है ।

905. जो पैसों का पूजारी है, वह देवता के पीछे भागता है ।

देवी देवता भी आपके पुण्य में हो-वही सुख सामग्री दे सकते हैं । संपूर्ण सुख तो सिर्फ धर्म की आराधना ही दे सकती है ।

906. देवता विरति धर्म की आराधना, नवकारशी चौविहार आदि कुछ भी नहीं कर सकते हैं, क्योंकि उनको विरति के परिणाम ही नहीं होते हैं ।

907. देवताओं के पास में सर्व विरति नहीं है परंतु देश विरति भी नहीं है ।

908. श्रावक धर्माधर्मी है। कुछ अंश में धर्म है, ज्यादा अंश में अधर्म है। समकिती देवता भी धर्माधर्मी है। मिथ्यादृष्टि देवता अधर्मी ही है।

तप पद दिन

909. काम, क्रोध, लोभ, मद, मान और हर्ष ये आत्मा के 6 अंतरंग शत्रु है।

910. कितना ही बडा वृक्ष हो, मंदिर हो, बंगला हो, वे सब काल के प्रभाव से एक दिन जर्जरित हो जाते हैं, नष्ट हो जाते हैं।

911. 5 पांडवों ने शत्रुंजय तीर्थ का 12 वाँ उद्धार कराया था। बाद में यशोधर भगवंत के सद् उपदेश से चारित्र धर्म स्वीकार किया था। विशेष तप-अभिग्रह किये। एक दिन नेमिनाथ भगवान के दर्शन के बाद ही पारणा करने का अभिग्रह किया। वहाँ पहुँचे तो भगवान के निर्वाण के समाचार सुने। अनशन के लिए शत्रुंजय की भूमि पसंद की और आज के दिन 20 करोड के साथ मोक्ष में गए।

912. श्रावक घर में जन्म लेता है, परंतु मरण तो साधु वेश में उपाश्रय में ही पाता है।

913. मंदिर में 2 प्रकार के स्तवन-गीत बोले जा सकते हैं 1) भगवान के गुणगान रुप 2) और अपने पापों की निंदा रुप। परंतु उपदेशात्मक स्तवन भगवान के आगे नहीं बोले जाते हैं।

914. जैसे शरीर में रही कोई भी बीमारी, चाहे वह गुप्त भाग में भी क्यों न हो, डॉक्टर को हम बताते हैं। उसी तरह हमारे जीवन के जो भी पाप हो, (जीवन की काली किताब) वह देव या गुरु के सामने प्रकट करनी चाहिए।

915. पाप करने से भी ज्यादा कठिन है, पाप का स्वीकार करना है।

916. भूल होने के दो कारण 1) अज्ञानता और 2) मोहावेश।

917. आराधना भवन के समान है, तो भव-आलोचना नींव भरने के समान है ।

918. दान, शील और तप तभी यथार्थ है जब धन का ममत्त्व, पांचइन्द्रियों की गुलामी और भोजन की आसक्ति टूटती हो ।

919. क्रोध अग्नि के समान है, मान-अजगर के समान है, माया-जाल के समान है और लोभ सांप के समान है ।

920. वर्तमान समाज में दान और तप बढा है, जबकि शील और भाव घटा है । भाव के विना दान, शील और तप वास्तविक लाभकारी नहीं हैं ।

921. यदि दोष ही गाने हो, तो अपने खुद के गाओ ।

यदि गुण गाने हो, तो दूसरो के गाओ, परंतु अपने गुण और दूसरे के दोष कभी मत गाओ ।

922. विष और विषय में फर्क सिर्फ एक अक्षर का है, परंतु विष तो एक भव में मारता है, जबकि विषय भवोभव मारते हैं ।

923. आत्मा के 6 शत्रुओं में सबसे ज्यादा बलवान काम है ।

5 इन्द्रियों में 4 इन्द्रियाँ तो बहुत कम भवों में मिली है परंतु स्पर्शन्द्रिय तो हर भव में मिली है ।

924. देवों में परिग्रह-संज्ञा, तिर्यंचों में आहार-संज्ञा, नारक में भय-संज्ञा और मनुष्यों में मैथुन-संज्ञा की प्रबलता होती हैं । इसलिए साधु को ब्रह्मचर्य के पालन के लिए 9 वाड़ बताई है ।

925. साधु महाराज पाँच में से चार महाव्रतों में अपवाद का सेवन करे तो क्षन्तव्य है, परंतु चौथे महाव्रत में कोई भी अपवाद नहीं है ।

926. मानव शरीर के नौ छिद्रों में कहीं भी हाथ डालो, गंदगी के सिवाय कुछ नहीं मिलेगा ।

927. पाश्चात्य संस्कृति में जन्मदिन में मोमबत्ती बुझाते हैं, इसका अर्थ है उजाले से अंधेरे में जाना ।

928. तमसो मा ज्योतिर्गमयम्-'हे प्रभु ! तु मुझे अंधेरे से ऊजाले की ओर ले जा ।'

929. योग्य वस्तु योग्य व्यक्ति को दी जानी चाहिए, जिससे वह लाभदायी बने ।

930. सांप को पिलाया दूध भी जहर में बदल जाता है और गाय को खिलाई गई घास भी दूध में रुपांतरित होती है ।

931. धर्म सभा मे आने वाले श्रोता-Peroll पर छूटे कैदी की तरह है । जैसे कैदी को Peroll पर 1 घंटे की छूट मिलती है । वैसे ही संसारी जीवों को प्रवचन श्रवण के लिए 1 घंटे की संसार में से छूट मिलती है ।

932. श्रावकोचित जो 6 उपधान है, उसे पूरा करने में 110 दिन लगते हैं, उसी के बाद मोक्षमाला पहनने का अधिकार मिलता है ।

परंतु वर्तमान में 110 दिन के उपधान में से 63 दिन (35 + 28) पूरे नहीं करने पर भी मोक्ष माला पहनने का अधिकार मिल जाता है ।

933. भगवान की वाणी में हमें चोर जैसा बनना है, जो बात पसंद पडे, वह उठा लो ।

934. इस उपधान में आने वाले पवित्र दिन 1) ओली पर्व 2) 5 पांडवो के 20 करोड के साथ मोक्ष गमन 3) दीपावली महापर्व 4) नूतन वर्ष 5) ज्ञान पंचमी 6) कार्तिक पूनम 7) चौमासी चौदस आदि ।

935. जैनों का दीपावली पर्व मौज-मजा का नहीं, बल्कि तप-जप और त्याग का है ।

936. जो तीन लोक के नाथ, ऐसे भगवान को नमस्कार करता है, उसको दुनियाँ में कहीं भी झुकने की जरुरत नहीं रहती ।

937. संसार के कार्य में `कल करे सो आज कर' का सूत्र अपनाते हैं, जबकि धर्म के कार्य में हम `आज करे सो कल कर' का सूत्र अपनाते हैं। परंतु इससे विपरीत होना चाहिए ।

938. आराधना के लिए सूत्र होना चाहिए `देहं पातयामि कार्यं साधयामि ।'

939. जब युद्ध के लिए एक सैनिक घर से निकलता है, तब उसे विजय तिलक किया जाता है, इस के साथ शुभेच्छा दी जाती है कि या तो विजयश्री प्राप्त करके आना अथवा शहीद हो जाना, परंतु, पीठ दिखा कर मत आना ।

940. हमें कोई भी पद मांगने का निषेध हैं, सिवाय साधु पद। गणि, पंन्यास, आचार्य पदवी मांगी नही जाती, योग्य व्यक्ति को योग्यता आने पर दी जाती हैं ।

941. जीवन मे धर्म को पाने के लिए 21 गुण बताए हैं ।

942. 21 गुण वें से प्रथम गुण-अक्षुद्र अर्थात् गंभीर होना ।

943. नदी और सागर दोनों में पानी है, परंतु सागर गंभीर है, नदी गंभीर नहीं है।

944. आँखें छोटी अर्थात् सूक्ष्म दृष्टि, पेट बडा अर्थात् गंभीर बनो, प्रदर्शन मत करो। ज्ञान, शक्ति आदि प्रदर्शनीय नहीं हैं ।

945. युधिष्ठिर की नजर में कोई भी दुर्जन नहीं था, दुर्योधन की नजर में कोई सज्जन नहीं था। दुनिया की दृष्टि का भेद है। गुणदृष्टि वाले को गुण ही दिखते हैं और दोष दृष्टि वाले को दोष ही दिखते हैं ।

946. Camera हमारे बाहर के शरीर का Photograph निकालता है, जबकि X-Ray Machine हमारे भीतर का Photograph (हड्डी) बताता है। हमारा मन कितना मैला है, यह हम जानते है अथवा केवलज्ञानी भगवंत जानते हैं ।

947. परमात्मा की सभा में, कामी, क्रोधी, लोभी, हिंसक आदि सभी प्रकार के पापी आते थे, परंतु भगवान कभी किसी के पाप को प्रकट नहीं करते थे । परमात्मा सागर की तरह गंभीर ह्रदय वाले होते हैं ।

948. अपनो पापों को दो जगह प्रकट किया जाना चाहिए-

1) भगवान के आगे । और 2) गुरु भगवंत के आगे अपने पाप प्रकट करने चाहिए ।

949. सूत्रकार महर्षि ग्रंथ की रचना स्व-पर उपकार के लिए करते हैं । ग्रंथ रचना से स्व का स्वाध्याय और परहित से परोपकार ।

950. किसी भी व्यक्ति की गुप्त बात किसी के सामने प्रकट नहीं करनी चाहिए ।

951. जिंदगी फूल जैसी होनी चाहिए, कांटों जैसी नहीं ।

952. मेरा दुःख-दर्द दूर हो, इसमें स्वार्थ वृत्ति है, जबकि जगत के सर्व जीवों के दुःख-दर्द दूर हो इसमें परमार्थ वृत्ति है ।

953. फूल को स्पर्श करनेवाले को कोमलता, संुघने वाले को सुगंध और पीसने वाले को ठंडक देता है ।

954. चंदन काटने वाली करवत को भी चंदन सुगंध देता है, घिसने वाले को भी सुगंध देता है ।

955. सुखी बनने का राज मार्ग : आपने पास जो कुछ भी सुख है, उसे बांटते रहो । दूसरो के दुःख में सहभागी बनें ।

956. पाँच इन्द्रियों की गुलामी से अनेक जीवों को बेमौत मरना पडता है ।

957. संगीत प्रिय हिरण, संगीत के कारण शिकारी का शिकार बनता है ।

958. पतंगें रुप प्रिय है, आग की लौ में आसक्त होता है, उसे लिपटने की इच्छा से वह बेमौत मरता है ।

959. भ्रमर को कमल की सुगंध में आसक्ति है, रात में कमल बंद हो जाता है, दूसरे दिन उसे हाथी आदि अन्य प्राणी खा जाते हैं ।

960. मछली को पकडने के लिए कांटे पर मांस का टुकडा लगाया जाता है ।

961. हाथी, हथिनी में लंपट होता है । हथिनी दिखाकर उसे फंसाया जाता है । बाद में महिने भर तक भूखा-प्यासा रखा जाता है । फिर वह महावत का गुलाम बनता है ।

962. ये सारे पशु एक-एक इन्द्रिय के कारण बेमौत मरते है, तो हमें तो पाँचों इन्द्रियाँ मिली हैं, हमारी क्या हालत होगी ?

963. सुनंदा के रुप में पागल बने रुपसेन को तिर्यंच के 7 भवों में बेमौत मरना पडा ।

964. जैन जाति नहीं है, धर्म है । जैन धर्म का पालन कोई भी कर सकता है ।

965. भूतकाल में अनेक ब्राह्मण आदि गणधर पद और युग प्रधान पद को पाये है ।

966. मति व श्रुतज्ञान के ऊपर आवरण के 3 कारण :- 1) रोग 2) वृद्धावस्था और 3) मृत्यु ।

967. माँ के हाथ में चाकू हो तो लाभकारी, नादान बच्चे के हाथ में हो तो खतरनाक ।

968. रक्षक के हाथ में हथियार हो तो सुरक्षा, चोर या डाकू के हाथ में हो तो खतरा ।

969. सज्जन के पास बुद्धि, लाभ का कारण है और दुर्जन के पास बुद्धि नुकसान का कारण है ।

970. शिल्पी के हाथ लगा पत्थर, मूर्ति बनता है । डाकू के हाथ लगा पत्थर किसी का सिर फोड देता है ।

971. जो सत्य सामने वाले का नुकसान करता हो, वह सत्य भी असत्य है ।

972. अनिषिद्धं अनुमतम्, जिस कार्य का निषेध न करो, उसमें अनुमति मानी जाती है ।

973. सौम्य स्वभाव अर्थात् शांत स्वभाव ।

जो व्यक्ति उग्र स्वभाव का होता है, वह सद्धर्म के लिए अयोग्य है ।

974. कसाई तो पशु को एक भव में मारता है, परंतु कषाय तो जीव को अनेक भवों तक मारता है ।

975. गैस के चुल्हे को जलाने में थोडा समय लगता है, परंतु क्रोधी का दिमाग गर्म होने में उतना भी समय नहीं लगता हैं ।

976. गुस्से के 4 प्रकार : 1) पानी की रेखा के समान- संज्वलन क्रोध 2) धूल की रेखा के समान-प्रत्याख्यानीय क्रोध 3) सुखे तालाब में पडी दरार समान-अप्रत्याख्यानीय क्रोध 4) पर्वत की दरार समान-अनंतानुबंधी क्रोध ।

977. सिर्फ वीतराग को गुस्सा नहीं आता है । संसारी प्रत्येक जीव को निमित्त मिलने पर क्रोध आता है ।

978. मुर्दे को रखने से उसमें बास आती है । क्रोध भी मुर्दे के समान है । उसे दफनाया नहीं गया, तो वह बढता रहता है ।

979. क्रोध एक बीमारी है, इसका तुरंत इलाज करो-माफी माँगो । `मिच्छा मि दुक्कडम् ।'

980. क्षमाभाव आत्मा का स्वभाव है । साधु क्षमा को अपने जीवन में आत्मसात् करने के लिए कोशिश करता है ।

981. एक क्रोड पूर्व वर्ष का संयम भी, क्रोध करने पर निष्फल हो जाता है। क्रोध सहित किया हुआ तप भी निष्फल जाता है।

982. तप के प्रभाव से आत्मा की शुद्धि होती है और शरीर भी ठीक हो जाता है।

983. तप में शरीर की स्वस्थता तो स्वतः है, उद्देश्य तो आत्मशुद्धि का ही होना चाहिए।

984. धर्म ऐसा चिंतामणि रत्न है, जो बिना मांगे सभी संपत्ति देता है।

985. साधु धर्म का पालन-क्षमा धर्म को आत्मसात् करने के लिए है।

986. लकडी और पेट्रोल आदि में आग रही हुई है, परंतु जब तक उसे चिनगारी का संपर्क नहीं होता, तब तक वे टंडी है, परंतु चिनगारी का संपर्क होने से उनमें आग प्रकट होती है।

987. अशुभ निमित्त, आग की चिनगारी के समान है। अशुभ निमित्त मिलने पर आत्मा के अन्दर रहे काम, क्रोध आदि की वासना भडक उठती है। इसलिए आत्मा को बचाने के लिए अशुभ निमित्त से दूर रहना चाहिए।

988. संसार में 3 प्रकार की आत्माएँ हैं– 1) स्वभाव से ही धर्म आराधना और करें। 2) उपदेश मिलने पर धर्म आराधना करें, 3) कितनी भी प्रेरणा करो, कोई भी आराधना न करें।

989. जो गुरु के प्रति समर्पित होता है, वह केवल ज्ञान पाता है।

990. भीतर से सच्चा धर्मी बनने के लिए 21 गुण बताए है।

991. जो व्यक्ति अंदर से सौम्य होगा, उसकी बाह्य प्रकृति भी सौम्य होगी।

992. लोकप्रिय अर्थात् लोक में निन्दनीय नहीं होना चाहिए।

993. जो व्यक्ति, इस लोक और परलोक में निन्दनीय प्रवृत्ति करता है, वह खुद इस लोक में निन्दनीय बनता है।

994. 16 वाँ पाप परपरिवाद । परायी पंचायत करना, यह पाप जिससे होता है, वह व्यक्ति भी लोक में निन्दनीय बनता है ।

995. परपरिवाद से फायदा कुछ नहीं होता परंतु नुकसान जरूर होता है । 1) अपने दुश्मन खडे होते है 2) नीच गोत्र का बंध 3) और जिस दोष की निंदा करते है, वह दोष हममें आता है ।

996. युवानों में दृष्टि दोष का पाप बढता हैं, जबकि बुढापे में दोष-दृष्टि का पाप नडता हैं ।

997. अपने जीवन में सुकृत हुआ हो तो उसे छुपाकर रखो । जैसे कपूर की गोली खुली रखने पर उड जाती है, उसी तरह सुकृत को खुला रखने पर सुकृत का पुण्य खत्म हो जाता है ।

998. अपने पापों को देव और गुरु आगे खुला करो, जिससे वे पाप खतम हो जाएंगे !

999. जब तक छद्मस्थ अवस्था है, तब तक भूल होना संभव है ।

1000. मोहनीय कर्म के क्षय होने पर ज्ञानवरणीय, दर्शनावरणीय और अंतराय कर्म का भी क्षय हो जाता है ।

1001. पाँचवा आरा काल की अपेक्षा से बहुत खराब गिना जाता है, फिर भी कलिकाल सर्वज्ञ इस काल की भी प्रशंसा करते है, क्योंकि इस कलियुग में भी प्रभुशासन मिला है ।

1002. इसी काल में पैदा हुई अनुपमा देवी की आत्मा जिन्होंने आबु देलवाडा के मंदिर के निर्माण कराए, आज महाविदेह क्षेत्र में केवली के रुप में विचरण कर रही है ।

1003 अपने मन की सबसे बडी कमजोरी है कि हम अपनी भूल को स्वीकार नहीं करते और उल्टा उसे बचाने की कोशिश करते हैं ।

1004. जो कभी भूल न करे, उसे भगवान कहते है, जो भूल कर कर भूल जाए, उसे नादान कहते है। जो भूल करके हंस पडे, उसे शैतान कहते है, और जो भूल कर सिख जाए, उसे इन्सान कहते है।

1005. ठोकर भी इन्सान को सबक सिखाती है, उससे सावधान रहना ही इन्सानियत है ।

1006. दूसरों का विचार करे वह देव और अपना ही विचार करे वह राक्षस।

1007. कूत्ते को खाना मिलने पर वह अकेला खाता है और कौआँ कभी अकेला नहीं खाता, सबको बुलाकर खाता है।

1008. कई व्यक्ति के मरने पर लोग कहते है-'पाप गया और पीडा मिटी' और कुछ जब मरते है तब लोग बहुत अफसोस करते है।

1009. शक्ति, संपत्ति वही प्रशंसनीय है, जो दूसरों के उपयोग में आए।

1010. परमार्थ की इच्छा वाले को हर कोई याद करते है, स्वार्थी को कोई याद नहीं करता।

1011. मक्खी-मधु इकट्ठा करने में पूरा जीवन समाप्त करती है, परंतु उसको वह कभी खा नहीं सकती, उसी प्रकार कंजुस व्यक्ति का संग्रहित धन कोई और ही खाता है।

1012. 7 व्यसन में चकचूर व्यक्ति लोक में निन्दनीय होता है।

1013. मनुष्य को ही पशु की उपमा दी जाती है, कभी पशु को मनुष्य की उपमा नहीं दी जाती है।

1014. पशु में कुत्ते की यह सबसे बडी कमजोरी है कि वह अपने जाति बंधुओं से लडता रहता है।

1015. आदमी ही एक प्राणी है, जो पशु भी बन सकता है, मनुष्य भी बन सकता है, देव भी बन सकता है और भगवान भी बन सकता है।

1016. सुख के दिन जल्दी पूरे होते है, और दु:ख की रातें लंबी होती है ।

1017. सिंहणी के दूध को धारण करने के लिए स्वर्ण पात्र चाहिए, उसी तरह भगवान का धर्म पात्र आत्मा में ही रह सकता है और इसीलिए जीवन में 21 गुण लाने के लिए पुरुषार्थ करना चाहिए ।

1018. 7 व्यसन 1) मांसाहार-मांस हमेशा पंचेन्द्रिय प्राणी का ही होता है । एकेन्द्रिय की अपेक्षा बेइन्द्रिय को, बेइन्द्रिय की अपेक्षा तेइन्द्रिय को, तेइन्द्रिय की अपेक्षा चौरिन्द्रिय को और चौरिन्द्रिय की अपेक्षा पंचेन्द्रिय को मारने में ज्यादा पाप लगता है ।

1019. शिकारी को तो सिर्फ निशाना साधना होता है, परंतु जिसपर वह निशान लगाता है, उसके तो प्राणों का नाश होता है ।

1020. परस्त्री गमन-अन्य की स्त्री की इच्छा या अनिच्छा से भोग ।

1021. विषय की वासना ऐसी है, कि जैसे-जैसे भोग करते जाओगे, इच्छा बढती जाएगी ।

1022. ब्रह्मचर्य के पालन के लिए 9 वाडे बताई है । जो वस्तु जितनी ज्यादा कीमती होती है उतनी सुरक्षा जरुरी है । सभी महाव्रतों में ब्रह्मचर्य ज्यादा कीमती है ।

1023. शक्य हो तो ब्रह्मचर्य महाव्रत का पालन करना चाहिए । यह शक्य न हो तो चौथे अणु व्रत स्वदारा संतोष एवं परस्त्रीगमन का त्याग करना चाहिए ।

1024. जो व्यक्ति परस्त्री को मातृ-भाव से देखता है, पर धन को पत्थर-समान देखता है, और जगत के सारे जीवों को आत्मसमान से देखता है, वही व्यक्ति देखता है बाकी व्यक्ति तो आँख होते हुए भी अंधा है ।

1025. पाँचवा गुण क्रूरता एक दोष है अक्रूरता गुण है ।

1026. जीभ जन्म से मिलती है, और अंत तक रहती है । दांत बाद में आते है और पहले चले जाते है । क्यों ? क्योंकि जीभ कोमल है और दाँत कठोर है ।

1027. जीवन में जीभ की तरह कोमल बनो, दाँत की तरह कठोर नहीं । जीभ की तरह बनोगे तो हमेशा रहोगे, दाँत की तरह बनोगे तो जल्दी चले जाओगे ।

1028. जीभ कोमल है, परंतु इससे निकलने वाले शब्द कठोर भी हो सकते है और कोमल भी हो सकते है ।

1029. जीभ में हड्डी नहीं होते हुए भी वह अनेक की हड्डियाँ तुडवा देती है ।

1030. कर्म के बंध के समय 4 वस्तुएं निश्चित होती है 1) प्रकृति 2) स्थिति 3) रस और 4) प्रदेश ।

1031. अपुनर्बंधक अवस्था को नहीं पाई हुई आत्मा ही कर्म की उत्कृष्ट स्थिति का बंध करती है ।

1032. क्रूर व्यक्ति कभी भी कोई भी अकार्य कर सकता है । क्रूर व्यक्ति धर्म को धारण करने के लिए अयोग्य है ।

1033. दूसरों को मारने में जितनी क्रूरता चाहिए, उससे ज्यादा क्रूरता अपने आपको मारने में चाहिए ।

1034. धर्म के लिए की गई स्वयं की हत्या आत्म हत्या नहीं बल्कि-आत्म बलिदान है ।

1035. दुनियाँ पाप के फल से डरती है, परंतु पाप मजे से करती है ।

1036. पैसो की नोट गिनते-गिनते 12 बज जाए तो भी व्यक्ति सावधान होकर गिनता है, परंतु नवकारवाली गिनते गिनते नींद आ जाती है ।

1037. **महासती कुन्ती की प्रार्थना :-** मुझे हमेंशा विपत्ति देना, जिससे मैं भगवान को हमेशा याद रख सकूंगी ।

1038. हम हमारे जीवन में सुख-संपत्ति व समृद्धि मांगते हैं, जिससे हम भगवान से दूर हो जाते हैं ।

1039. दुःख में भी भगवान याद आना, अत्यंत कठिन है । बीमारी में डॉक्टर याद आते हैं, भगवान नहीं ।

1040. अति दुःख, अति सुख और अति भूख में व्यक्ति धर्म नहीं कर सकता । उदा. नारक, देव और तिर्यंच ।

1041. धन के नशे में व्यक्ति जमीन से अधर चलता है । धन भी पुण्य के उदय तक ही रहता हैं ।

1042. संसार में जो कोई भी सुख है वह पुण्य के अधीन है । पुण्य साथ देता हो तब तक मजा है, परंतु जैसे ही पुण्य का आधार खत्म हो जाता है और पाप का उदय आता है, व्यक्ति दुःखी हो जाता है ।

1043. दान देना और दान पाना दोनों पुण्य के उदय से ही हो सकते हैं ।

1044. मानव धर्म के फल को चाहता है, परंतु धर्म को नहीं और पाप के फल को नहीं चाहता है, परंतु पाप आदरपूर्वक करता है ।

1045. कुत्ते को पत्थर फेंकने पर कुत्ता पत्थर को चाटता है और सिंह के ऊपर पत्थर फेकने पर सिंह फेकने वाले से लडता है ।

1046. जो अवश्य होने वाली घटना है, उसे केवली भी मिथ्या नहीं कर सकते है । भवितव्यता को टाला नहीं जा सकता है ।

1047. मोह से प्रेरित होकर जीवात्मा 12 प्रकार के तप करती है परंतु धर्म से प्रेरित होकर नहीं करती है ।

1048. अपने आत्म हित के लिए मैत्री आदि चार भावना करनी चाहिए और वैराग्य बढाने के लिए अनित्यादि 12 भावना करनी चाहिए ।

1049. जगत के सभी जीवों के ऊपर मैत्री भावना, जो आराधक है, तपस्वी है, उनके प्रति प्रमोद भावना, जो अपराध करते है उसपर माध्यस्थ भावना और जो दुःखी है उनके ऊपर करूणा भावना ।

1050. योगसार ग्रन्थ में कहा है कि मात्र क्रिया, तप, त्याग से व्यक्ति धर्मी नहीं है, परंतु मैत्री आदि भावना करनेवाला व्यक्ति धर्मी है ।

1051. हस्ताक्षर के बिना लाख रुपये के चेक की कोई कीमत नहीं, उसी तरह अभ्यंतर धर्म के बिना बाह्य धर्म की कीमत नहीं ।

1052. उपधान उप = पास में, आधान = न्यास करना । गुरु के पास से सूत्र का न्यास करना ।

1053. समाधि का सूत्र-सुख में मशगूल न होना और दुःख में दीन न होना ।

1054. पू. हर्षविजयजी-जोग की क्रिया के अधिकर्ता थे । कालधर्म के 4-5 घंटो के पहले भी जोग की क्रिया करवाई । क्रिया के अत्यंत रागी थे ।

1055. जीवन चाहे कितना ही ऊजला क्यों न हो, अंतिम समय बिगडे, तो सब निष्फल । उसी प्रकार जीवन चाहे कितना ही बिगडा हुआ क्यों न हो, मरण समय में समाधि हो तो सब सफल ।

1056. जिसके हृदय में गुरु का वास, उसके लिए गुरुदेव 24 घंटे हाजिर है, और 24 घंटे सेवा करते हुए भी यदि गुरु समर्पण नहीं, तो गुरु से कोसों दूर है ।

1057. भवन निर्माण करते समय सबसे पहले नींव को पत्थर, सिमेन्ट आदि वस्तुओं से भरा जाता है, उसी तरह हमारे जीवन मे धर्म रुपी रत्न को स्थापित करना हो तो जीवन को गुणों से भरना जरुरी है ।

1058. भाषा में भी क्रूरता वाले शब्दों का उच्चारण नहीं करना चाहिए। खाओ, काटो, मारो आदि शब्द क्रूरतावाले है। इन शब्दों के बदले वापरो, मंगल करो आदि का प्रयोग करना चाहिए।

1059. हंस और बगुला दोनों बाहर से सफेद है, परंतु हंस का तन और मन दोंनो साफ है, परंतु बगले के मन में मैल है, वह सिर्फ बाहर (तन) से ऊजला है।

1060. पंक्षी को दाना डालना धर्म है। दया की प्रवृत्ति है, परंतु कसाई पंक्षी को फंसाने के लिए दाना डाले तो भी वह दयालु नहीं कहलाता है।

1061. सच्चे हितैषी कौन ? जो आत्मा का हित चाहे।

1062. मंदिर जाते समय खाली हाथ नहीं जाना चाहिए। अष्टप्रकारी पूजा की सामग्री जरुर लेकर जाना चाहिए।

1063. मंदिर व उपाश्रय में प्रवेश करते समय निसीहि और बाहर निकलने समय साधु तथा पोषध व्रती को आवस्सहि जरुर बोलना चाहिए।

1064. मायावी का लक्षण है मुख में राम-बगल में छूरी।

1065. सांप भी जब बिल मे प्रवेश करता है, तब सीधा जाता है।

1066. सरल व्यक्ति के मन-वचन और काया में एकता होती है।

1067. दूसरो को ठगने वाला व्यक्ति वास्तव में अपने आप को ही ठगता है।

1068. धागे में गांठ आने पर सिलाई मशीन रुक जाती है, उसी तरह जीवन में गांठ आने पर प्रगति रुक जाती है।

1069. भूल होना अलग बात है और भूल का कबूल करना अलग बात है। भूल को कबूल करने के लिए जीवन में सरलता जरुरी है। माया होती है तब भूल का स्वीकार नहीं हो सकता है।

1070. जीवन मे एक दुर्गुण आने पर उसके पीछे अनेक दुर्गुण आ जाते हैं ।

1071. माया के पाप के लिए 18 पापस्थानक में दो पाप है...8वां-माया और 17 वां माया मृषावाद ।

1072. 3 शल्य से रहित होकर तप करना चाहिए । शल्य = कांटा ।

1) माया शल्य, 2) निदान शल्य और 3) मिथ्यात्व शल्य ।

1073. **8 वाँ गुण दाक्षिण्यता :-** प्रार्थना करने वाले की प्रार्थना का स्वीकार करना ।

1074. जंबु कुमार ने काम के घर में रहकर काम पर विजय प्राप्त की थी ।

1075. वर्षा का पानी, गर्म तवे पर पडे तो भाप बन जाता है ।
सांप के मुख में गिरे तो जहर बन जाता है ।
समुद्र मे गिरे तो अक्षय बन जाता और
स्वाति नक्षत्र में शीप के मुँह में गिरे तो मोती बन जाता है ।

1076. 3 प्रकार के श्रोता 1) एक कान से सुने, दूसरे कान से निकाले । उसकी कींमत फूटी कोडी ।

2) एक कान से सूने और मुख से निकाले ।

3) एक कान से सुने और जीवन में उतारे, उसका मूल्य अमूल्य है ।

1077. उपदेश भी योग्य को ही दिया जाना चाहिए । अयोग्य को उपदेश देना, लाभ के बदले नुकसान का कारण बनता है ।

1078. जगत् मे सबसे सरल कार्य-उपदेश देना । सबसे कठिन कार्य उपदेश को आत्मसात् करना ।

1079. कच्चे घडे में पानी भरने से घडा भी नष्ट होता है और पानी भी ।

1080. कोई भी गुण और दोष को बार बार सेवन करने से वह दृढ बनता है ।

1081. उपवास-उप=समीप में, वास=रहना। आत्मा के समीप में रहना, वह उपवास है।

1082. स्त्री फंसती है रुपये के कारण और पुरुष फंसता है रुप के कारण।

1083. दुनिया दो चीजों के पीछे पागल है-शास्त्रीय भाषा में अर्थ और काम। रुप और रुपया।

1084. पूज्य हेमचन्द्रचार्यजी द्वारा रचित दो अमुल्य ग्रन्थ। योगशास्त्र तथा वीतराग स्तोत्र। योगशास्त्र-भगवान के मार्ग को बताता है।

वीतराग स्तोत्र-भगवान की पहिचान कराता है।

1085. नवपद में सिद्धपद और तप पद, पास पास रहे हुए है।

1086. योगशास्त्र मे निर्जरा भावना मे तप का गुणगान करते कहा है, जैसे खान में से निकला सोना अशुद्ध है, परंतु उसे अग्नि में तपाया जाए तो जो मैल है वह जल जाता है, और शुद्ध सोना प्रकट होता है।

साबु और पानी मलिन कपडे के मैल को खत्म करते है। कपडा खत्म नही होता। तप कर्म के मैल को दूर करता है और आत्मा को शुद्ध बनाता है।

1087. कर्म को खपाने के लिए क्षपक श्रेणी है, जो सारे कर्म को खत्म कर देती है तथा कर्म को शांत करने के लिए उपशम श्रेणी है, जो क्रोधादि कषाय को उपशांत करती है।

1088. जैन धर्म में तप की बाबत में जितना लचिलापन है, वैसा कहीं भी नहीं। जिसकी जितनी शक्ति हो उतना वह करे। शक्ति का उल्लंघन नहीं।

1089. जैन धर्म का कोई भी पर्व हो, वह तप के साथ अवश्य जुडा हुआ है। तप विकार को नष्ट करता है।
व्याधि उपाधि को नष्ट करता है।

1090. अनादि कालीन हमारा संसार कर्म बंध पर टिका है। जब तक कर्म बंध, तब तक भव का बंधन है।

1091. हमारी मानसिक और कायिक जितनी भी समस्याएँ है, उसका मूल कारण हमारा कर्म है। इस कर्म से मुक्त होने का उपाय तपश्चर्या है।

1092. पाप कर्म में लज्जा रखना गुण है।

भगवान ऋषभदेव के साथ दीक्षित 4000 साधु, एक ओर भूख और प्यास की पीडा सहन नहीं कर पाते है और दूसरी ओर भरत महाराजा की लज्जा से घर भी नहीं जा सकते है। इस कारण वे तापस बन गए।

1093. दीक्षा के दिन सुमतिनाथ भगवन ने एकासना, पार्श्वनाथ भगवान और मल्लिनाथ ने अट्ठम का तप और शेष 21 भगवान ने छट्ठ का तप किया था।

1094. सुखी व्यक्ति हमेशा अपने परिवार के लोगों को भी सुखी बनाने की इच्छा करता है। सच्चे धर्म को पाया व्यक्ति अपने परिवार को भी धर्म में जोडने की इच्छा रखता है।

1095. सच्चे माँ-बाप कौन ? सिर्फ जन्म देने वाले ? नहीं। जन्म तो वेश्या भी देती है, परंतु बाद में उसे अनाथ आश्रम में छोड देती है।

जीवन देने वाले ? नहीं। क्योंकि पक्षी भी जब अपने अंडे देते है तब उसका सेवन करते है।

1096. सिर्फ जन्म या जीवन देने से सच्चा मातृत्व या पितृत्व नहीं आता है।

1097. आत्मा को माता-पिता का संबंध सिर्फ मनुष्य भव में ही है। बच्चा अपने पैर पर खडा न हो तब तक पशुयोनि में माँ संबंध है।

जब तक स्तन-पान करता हो तब तक माँ-बाप से संबंध रखे वह पशु के समान है ।

जब तक पत्नी न हो तब तक माता पिता से संबंध रखे, वे अधम है । जब तक माता पिता के पास धन आदि है, तब तक संबंध रखे, वे मध्यम है और जो जीवन पर्यंत माता-पिता की सेवा करे, वह व्यक्ति उत्तम है ।

1098. तेजपाल की पत्नी अनुपमा देवी-वर्ण से श्याम थी, तेजपाल को विवाह के पूर्व इस बात का पता चलने पर भी लज्जा गुण के कारण पिता को इन्कार नहीं किया ।

1099. जो वचन दे दिया, उससे फिरना नहीं । वह उत्तम कुल का लक्षण है ।

1100. कन्या के लिए पाणिग्रहण जीवन में एक ही बार बताया है ।

1101. दीक्षा के महाव्रत में कोई लचिलापन नहीं है । जो भी व्रत है वे पूरे जीवन के लिए और सर्वथा है । जबकि श्रावक के व्रत में लचिलापन है, थोडा भी नियम, थोडी देर (काल) के लिए भी लिया जा सकता है ।

1102. सच्चे माँ-बाप वे ही कहलाते है जो अपने आश्रय में आई संतानों के सिर्फ शरीर की नहीं, बल्कि आत्मा की भी चिन्ता करते हैं ।

1103. वर्तमान मे अधिकांश मा-बाप बच्चों के शरीर एवं व्यवहारिक शिक्षा आदि की चिन्ता करते हैं, आत्मा की चिन्ता करने वाले और संस्कार देने वाले बहुत विरले होते हैं ।

1104. सच्चा मित्र भी वही है, जो अपने मित्र को धर्म में जोडें । उपदेश रहस्य में धर्म को पाने के लिए सर्व प्रथम गुण कल्याण मित्र बताया है ।

1105. कल्याण मित्र कोई भी बन सकता है। पति-पत्नी के लिए, पत्नी पति के लिए, गुरु-शिष्य के लिए और साधु साधु या साध्वी के लिए आदि।

1106. जीवन में आपत्ति के समय में भी जो धर्म में स्थिर करे वह कल्याणमित्र कहलाता है।

1107. लज्जालु व्यक्ति लज्जा के कारण भी मर्यादा का पालन करता है।

1108. लज्जालु व्यक्ति देव, गुरु, संघ की हाजरी में स्वीकार किए व्रत तोडता नहीं है।

1109. नवकार महामंत्र में अरिहंतादि को नमस्कार है तो साथ मे उनके किये हुए सुकृतों की अनुमोदना है।

1110. इरियावहियम् सूत्र में दुष्कृतों की गर्हा है। पापों की शुद्धि के लिए प्रतिक्रमण है।

1111. राजाओं के भी राजा और चक्रवर्ती तथा इन्द्र देवेन्द्र भी जिसको नमस्कार करे, उन अरिहंत आदि को हम नवकार में नमस्कार करते है।

1112. लोक में भी जो धनवान, शक्तिमान है उसको नमस्कार करने से नमस्कार करने वाले को अवश्य लाभ होता है।

1113. लोकोत्तर ऐसे भगवान को नमस्कार करने से हमें उनके तुल्य बनने का लाभ मिल सकता है। भगवान महावीर को पाकर 9 आत्माओं ने तीर्थंकर पद की निकाचना की।

1114. समुद्र के पास व्यक्ति एक घडा लेकर जाए तो उसे एक घडा जितना ही पानी मिलता है, ज्यादा नहीं। क्या समुद्र कृपण है ? नहीं। परंतु सामने वाले के पास उतना ही पात्र है।

1115. ऋषभ देव प्रभु का आलंबन लेकर असंख्य आत्माओं ने सिद्ध पद प्राप्त किया है ।

1116. गौतमस्वामी के पास केवलज्ञान नहीं होने पर भी दूसरों को केवलज्ञान का दान करते थे ।

1117. गुणवान के गुणों की नमस्कार करने से 1) उनके गुण हम में आते है और 2) पुण्य का पूंज खडा होता है ।

1118. रोग को नष्ट करने के लिए अपथ्य का त्याग और दवाई का सेवन, दोनों जरुरी है । उसी तरह आत्मा के विकास के लिए पुण्य की भी जरुरत है और साथ में अपने किये हुए पाप को साफ करने के लिए पाप प्रवृत्ति का त्याग भी जरुरी है ।

1119. उपधान के प्रथम अठारीये में सुकृत की अनुमोदना है तो दूसरे अठारीये में दुष्कृत की निंदा है ।

1120. सुकृत करने के बाद मन में पश्चात्ताप आ जाए तो मेरु जितना पुण्य भी राई जितना बन जाता है ।

1121. मरण के समय समाधि की प्राप्ति के लिए दस उपाय बताए है । इनमें से 9 उपाय न भी करे परंतु एक नवकार में ध्यान रह जाय तो भी परलोक सुधार सकता है ।

1122. धर्म का मूल दया है । जितने भी धर्म अनुष्ठान है, वे दया के ही विस्तार है ।

1123. पांच महाव्रतों को एक में समावेश करना हो तो प्रथम महाव्रत में कर सकते है ।

1124. दशवैकालिक में कहा है कि जगत में सभी जीव जीना चाहते है । मरना कोई नहीं चाहता है ।

1125. जो जीवों का रक्षण करता है, वही धर्म कर सकता है ।

1126. सात क्षेत्र और उसके बाद अनुकंपा में अपना धन व्यय करना चाहिए ।

1127. गुन्हेगार व्यक्ति भी सजा पात्र नहीं, परंतु दया के पात्र है ।

1128. पापी में पापी व्यक्ति भी घृणा पात्र नहीं परंतु दया के पात्र है ।

1129. बाहर से जो दुःखी है, उसके दुःख को दूर करना द्रव्य दया ।

1130. भाव दया = धर्म हीन व्यक्ति को धर्म की प्राप्ति कराना ।

1131. फूल की कीमत सुगंध के आधार पर है, दूध की कींमत मलाई के कारण है, उसी तरह मनुष्य की कीमत दया के आधार पर है ।

1132. आत्मा संपूर्णतया वीतराग 12वे गुण स्थानक पर है ।11वें गुणस्थानक उपशांत मोह में राग द्वेष शांत हो जाते है परंतु खत्म नहीं होते ।

1133. मोह राजा के दो बेटे है राग और द्वेष । जगत की सारी समस्याओं का मुख्य कारण राग और द्वेष ही है ।

1134. द्वेष के दो बेटे क्रोध और मान है । और राग के दो बेटे माया और लोभ है ।

1135. समता का साधक कौन ? जो कनक और पाषाण को समान गिने, जो निन्दा और प्रशंसा को समान गिने ।

1136. मानव को सबसे ज्यादा मान चाहिए ।

1137. दो नेत्र तो सभी मनुष्य के पास है, परंतु विवेक रुपी चक्षु जिसके पास नहीं है वह अपने मनुष्यभव को हार जाता है ।

1138. जब व्यक्ति क्रोधान्ध और कामांध बनता है, तब उसके विवेक चक्षु बंद हो जाते है ।

1139. काम, क्रोध, लोभ ये तीनों खतरनाक है । हो सके तो उनको उठने ही नही देना, और यदि उठ जाए तो जल्दी से जल्दी उन्हे खत्म कर देना ।

1140. जो आत्महित की चिन्ता करते है, वे ही सच्चे हितैषी है ।

1141. न्यायी व्यक्ति दोनों पक्ष की बातों को सुनकर मध्यस्थ रहकर न्याय करता है ।

1142. राग होगा तो झूठी बात का भी स्वीकार होगा और तीव्र द्वेष होगा तो सच्ची बात भी अस्वीकार हो जाएगी । राग और द्वेष माध्यस्थ भाव आने नहीं देते है ।

1143. जिसकी दृष्टि मध्यस्थ होती है, वह व्यक्ति ही धर्म के मर्म को समझ सकता है ।

1144. निष्पुण्य के पास चिंतामणी रत्न कैसे ? उसी प्रकार निर्गुण के पास धर्मरत्न कहाँ से ?

1145. निष्पुण्य व्यक्ति को धनादि सामग्री मिल भी जाए तो भी वह उसे पचा नहीं सकता ।

1146. जिस व्यक्ति के पास दोष दृष्टि है, वह हर जगह दोष ही देखता है ।

1147. जिस व्यक्ति के पास गुण दृष्टि है, वह हर जगह गुण ही देखता है ।

1148. Jain साधु का जीवन कैसा ? Simple Living & High Thinking.

1149. स्थापना निक्षेप से हम प्रतिमा में भगवद् भाव का आरोपण करते है ।

1150. भगवान के कल्याणक के दिन की आराधना, हमारा भी कल्याण करने में समर्थ है ।

1151. अवसर्पिणी काल में बल, आयुष्य, शक्ति, गुण आदि सब कम-कम होते जाते है । उत्सर्पिणी काल में सब बढता जाता है ।

1152. तीर्थंकर का आयुष्य, उस काल की अपेक्षा से मध्यम आयुष्य होता

है । जैसे भगवान ऋषभ देव स्वामी के समय उत्कृष्ट आयुष्य एक करोड पूर्व वर्ष था और भगवान का आयुष्य 84 लाख पूर्व वर्ष था ।

1153. भरत क्षेत्र और ऐरावत क्षेत्र में 90% युगलिक काल है । सिर्फ 10% काल में ही धर्म का अस्तित्व है ।

1154. काल चक्र मे अवसर्पिणी का छठ्ठा और उत्सर्पिणी का 1ला आरा सबसे ज्यादा पाप वाला है ।

1155. Jain कोई जाति नहीं परंतु धर्म है । भगवान महावीर के ग्यारह गणधर, अधिकांश 14 पूर्वी, आदि जन्म से जैन नहीं बल्कि ब्राह्मण थें ।

1156. भगवान ऋषभदेव के निर्वाण के 89 पक्ष बाद अर्थात् 3 वर्ष 8.5 महिने बाद चौथा आरा शुरु हुआ, उसी तरह भगवान महावीर स्वामी के निर्वाण के 89 पक्ष के बाद पाँचवां आरा शुरु हुआ ।

1157. धर्म की प्राप्ति न हो, वैसा चक्रवर्ती भी काम का नहीं और धर्म की प्राप्ति हुई हो तो गरीबी भी सार्थक है ।

1158. पू. कलिकाल सर्वज्ञ ने 1 से 4 आरे को श्रेष्ठ नहीं माना और पाँचवा आरा श्रेष्ठ माना, क्यों ? धर्म की प्राप्ति इस आरे में हुई है ।

1159. जीवन क्षणभंगुर है, इसमें जो कुछ भी अच्छी प्रवृत्ति हो रही है, वह देव-गुरु और धर्म की कृपा से हो रही है ।

1160. दीक्षा के लिए धनवान होना जरुरी नहीं परंतु भाग्यशाली होना जरुरी है ।

1161. भगवान ने निर्वाण के पहले 36 अध्ययन उत्तराध्ययन सूत्र के तथा पुण्य-पाप फल के 55 अध्ययन की देशना दी ।

1162. 24 तीर्थंकरो में से सिर्फ दो तीर्थंकरों का ही सम्यक्त्व प्राप्ति के बाद अधः पतन हुआ है । श्री पार्श्वनाथ और श्री महावीर स्वामी ।

1163. भगवान महावीर स्वामी के पाँचों कल्याणकों में आश्चर्यकारी घटनाएँ बनी ।

1) च्यवन में दो माता-पिता और गर्भ परिवर्तन ।

2) जन्म में मेरु का कंपन ।

3) दीक्षा अकेले ने ली । (23 तीर्थंकरो ने अनेक के साथ ली ।)

दीक्षा के बाद भी ब्राह्मण को दान दिया ।

4) केवलज्ञान के दूसरे दिन तीर्थ स्थापना ।

5) निर्वाण भी अकेले गए, साथ में कोई नहीं । अंत मे 16 प्रहर की देशना ।

1164. इस दुनिया में चार पुरुषार्थ है । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । परंतु इनमें से काम और अर्थ तो सिर्फ नाम के पुरुषार्थ है । वे आत्मा का पतन करने वाले है । अपनी आत्मा के सबसे बडे दुश्मन है ।

1165. श्रावक यदि चौथा व्रत स्वीकार करे तो उसके 50% पाप खत्म हो जाते हैं ।

1166. जो साधु 10 प्रकार के यति धर्म का पालन करता है । वह आत्मा ही संसार सागर से पार उतर सकती है ।

1167. श्रावकों के कर्तव्यों में पुण्य प्रधान अनुष्ठान ज्यादा और निर्जरा प्रधान अनुष्ठान कम हैं ।

1168. संसार-अनंत दुःख से भरा हुआ है ।

जहाँ सुख का नाम नहीं और दुःख का पार नहीं उसका नाम संसार ।

जहाँ दुःख का नाम नहीं और सुख का पार नहीं, उसका नाम मोक्ष ।

1169. मोक्ष का सत्य स्वरुप क्या है ? यह जैन दर्शन में अच्छी तरह से बतलाया है ।

1170. सिद्ध आत्मा में पूर्ण ज्ञान है-भूत-भविष्य और वर्तमान का ।

1171. जगत के सभी जीवों की 3 इच्छाएँ है 1) वे कभी मरना नही चाहते हैं 2) सुख पाने और दुःख से मुक्त बनने की और 3) मुझसे बढकर सुख किसी के पास न हो ।

1172. इच्छा पूर्ति में दुःख है, इच्छामुक्ति में सुख है । यह बात धर्म कहता है ।

1173. व्रत नियम रुपी इमारत, समकित के ऊपर ही टिकी है । समकित मूल है और व्रत नियम वृक्ष के समान है ।

1174. मनुष्य ढाई दीप मे ही जन्म लेता है और मृत्यु भी ढाई द्वीप के अंदर ही होती है । मोक्ष भी ढाई द्वीप से ही होता है ।

1175. 500 योजन से ज्यादा उँचाई, तथा असंख्य वर्ष के आयुष्य वाले मनुष्य मोक्ष में नहीं जा सकते हैं ।

1176. 5 वे आरे में जन्में जीवों का सीधा मोक्ष नहीं हैं, परंतु मोक्ष मार्ग की साधना तो कर सकते हैं ।

1177. आयुष्य का बंध जीवन में एक ही बार होता है ।

1178. बारहव्रत की पूजा मे कहा है कि इन्द्र महाराजा जब की अपनी इन्द्र सभा में बैठते है तब वे विरति को अर्थात् विरतिधर को प्रणाम करते है ।

1179. योगी खाए एक बार, भोगी खाए दो बार और रोगी खाए बार बार ।

1180. स्वास्थ्य का 1 सूत्र :- पेट को रखो नरम, पांव को रखो गरम, शिर को रखो ठंडा और फिर Doctor आवे तो उसे मारो डंडा ।

1181. सामायिक पौषध मे Mobile आदि किसी भी Electronic का स्पर्श नहीं करना चाहिए ।

1182. साधु भगवंत तथा पोषार्थी दिन मे 9 बार 'करेमि भंते !' की प्रतिज्ञा को याद करते है ।

1183. एक बार देववंदन में 5 बार नमुत्थुणं सूत्र बोला जाता है । इस सूत्र में भगवान के 33 विशेषण है । विशेषण बोलने से व्यक्ति की विशेषता का ख्याल आता है । उसी तरह भगवान के विशेषण बोलने से उनके स्वरुप की पहिचान होती है, तथा उनके साथ घनिष्ठ संबंध जुडता है ।

1184. भगवान वीतराग जरुर है, परंतु उनका बहुमान या अपमान करने वाले को कर्म सत्ता जरुर फल देती है ।

1185. विश्व मे दो बडी सत्ता काम करती है । 1) कर्म सत्ता, 2) धर्म सत्ता । कर्म सत्ता-न्यायाधीश के समान है । तो सजा फटकारती है और ईनाम भी देती है । धर्म सत्ता-राष्ट्रपति के समान है । वह उसकी शरण में आए हुए के गुनाहों को माफ भी करती है ।

1186. पूरी दुनिया विश्वास पर चलती है, जगत में जहाँ जाए वहाँ हम अनेक व्यक्ति पर विश्वास करते है ।

Doctor की दवाई तथा उसकी सलाह पर विश्वास ।

दाढी बढी हो तो किसी भी शहर के हजाम पर विश्वास ।

किसी भी शहर के कंदोई की बनाई मिठाई पर विश्वास ।

पत्नी से झगडा होने पर भी पत्नी की बनाई रसोई पर विश्वास । किसी भी Train, Bus आदि के Driver को नहीं देखा हो तो भी उसपर विश्वास ।

हम सब पर विश्वास करते है, परंतु वर्तमान में जिसको सबसे ज्यादा पूजते है, जिसको सबसे ज्यादा मान देते है, जिसके लिए सबसे ज्यादा खर्च करते है ऐसे देव और गुरु की बातों में हमें कितना विश्वास ?

1187. सोने के मंदिर और रत्नों की प्रतिमा भराने वाले व्यक्ति का भी संघ ज्यादा से ज्यादा कितना बहुमान करेगा ? 1 हार, momento, शॉल, तिलक, साफा आदि परंतु खमासमण तो नही ना ! वो खमासमण हम गुरु के आगे देते है अर्थात् अपना माथा उनके चरण में देते है ।

1188. कई बार अजैनो के आचरण से ऐसा लगता है कि वे जन्मे जैन नहीं परंतु कर्मे जैन है ।

1189. पाप 3 प्रकार से होते है-मन, वचन और काया से । ये 3 पाप भी 3 प्रकार से करण, करावण और अनुमोदन से होते हैं ।

1190. वर्तमान की Court सिर्फ काया के पाप, वह भी कानुन के आधार पर सिद्ध हुए पापों की सजा दे सकती है । जबकि कर्म सत्ता तो सभी प्रकार से किये पापों की सजा देती है ।

1191. धर्म सत्ता की शरण में आया हुआ व्यक्ति, उसने चाहे कितने ही बडे पाप किये हो, उनको माफ कर देती है ।

1192. संयम जीवन में और पौषध मे श्वास लेने के लिए भी गुरु की आज्ञा लेने का विधान है ।

1193. वैसे तो बिना कारण बातचित नहीं करनी चाहिए, परंतु विशेष से विकथाएँ तो नहीं करनी चाहिए ।

1194. 4 प्रकार की विकथा :- राज कथा, भोजन कथा, देशकथा और स्त्रीकथा । ये नहीं करनी चाहिए और धर्मकथा करनी चाहिए ।

1195. वंदित्तु सुत्र में गाथा `चिर संचिय पाव' इसका अर्थ है कि । चिर काल से इकट्ठे किये हुए सारे पापों को खत्म करने की ताकत भगवान के जीवन की कथा करने में है ।

1196. धर्म के शरण में जाने वाला हिंसक, चंडकौशिक भी, भगवान के आलंबन को पाकर 8वे देवलोक में चला गया ।

1197. यात्रा करने के साथ घूमने-फिरने का उद्देश्य आ जाए, तो वह 100 लीटर दूध में एक बुंद जहर डालने के समान है ।

1198. पाप का प्रवेश द्वार आँख है, फिर मन ललचाता है और बाद मे सारी इन्द्रियाँ कार्य करती है ।

1199. चार प्रकार की विकथा को छोडने वाला व्यक्ति ही धर्म के लिए अधिकारी और योग्य बनता है ।

1200. जहरीला लड्डू वर्तमान में स्वादिष्ट है परंतु परिणाम में मृत्यु का फल देने वाला है । तथा सुखी रोटी वर्तमान में स्वादिष्ट नही परंतु परिणाम में भी बूरी नहीं हैं ।

1201. संसार के सारे सुख वर्तमान में मीठे लगते है परंतु परिणाम में कडवे हैं ।

1202. दीक्षा में असली परीक्षा विहार दरम्यान है । कभी अनुकुलता तो कभी प्रतिकूलता ।

1203. साधु जीवन में बाहर से प्रतिकूलता जरुर है, परंतु परिणाम में सुख देने वाली है ।

1204. हमारी आत्मा को शाश्वत सुख की इच्छा है, परंतु हमारी दौड तो नकली सुख के पीछे है । जैसे सुअर के सामने दूधपाक और विष्टा रखो तो वह विष्टा की ओर ही जाएगा ।

1205. जगत के सभी जीवों को पुण्य का फल सुख ही चाहिए परंतु प्रवृत्ति तो पाप की ही करते है ।

1206. संसार के सारे सुख प्रारंभ में मीठे है, परिणाम में अत्यंत कटु है ।

1207. दुनियाँ मे देने वाला उपकारी माना जाता है, परंतु भगवान के लोकोत्तर धर्म में देने वाला अपने आप को छोटा मानता है ।

1208. भगवान ने दीक्षा लेने के पहले रोज 1 करोड 8 लाख सोना मोहर का दान दिया लेकिन दीक्षा के बाद 1 भी वस्तु का दान नहीं दिया । उन्होंने तो नहीं दिया परंतु साधु को भी द्रव्य दान का निषेध किया ।

1209. जिस गुरु से समकित की प्राप्ति हुई हो उनकी पूरी जिंदगी सेवा करने पर भी उनके उपकार के ऋण को चुकाया नहीं जा सकता है ।

1210. जैन दर्शन कहता है कि जहाँ नमस्कार वहाँ चमत्कार । परंतु जगत् में लोग जहाँ चमत्कार होता है वहाँ नमस्कार करते है ।

1211. नवकार का `न' बोलने से 7 सागरोपम के पाप नष्ट होते है, `नमो अरिहंताणं' बोलने से 50 सागरोपम व पूरा नवकार बोलने से 500 सागरोपम के पाप नष्ट होते हैं ।

1212. जैसे Police के आने पर सभी चोर भाग जाते हैं, सूर्य के उगने पर अंधकार भाग जाता है उसी प्रकार नवकार के स्मरण से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं ।

1213. शास्त्रों में कहा है कि जिनेश्वर की भक्ति से जो कार्य न हो वह कार्य दूसरे से कैसे हो सकता है ?

1214. धर्म के प्रभाव से दुश्मन भी दोस्त बन जाता है, साँप भी फूल की माला बन जाती है, शुली भी सिंहासन बन जाता है और अग्नि का कुंड जल का सरोवर बन जाता है ।

1215. चंदन तो घिसने के बाद शीतलता देता है, परंतु भगवान का तो नाम स्मरण भी शीतलता देता है।

1216. नरक में भी नारक आत्मा परमात्मा के नाम का स्मरण करती है उन्हें भी दुःख में समाधि मिलती है।

1217. पुण्य के बढने से पाप अपने आप खत्म हो जाता है, और पाप खत्म होने से दुःख नष्ट हो जाते हैं।

1218. बाहर से धर्म क्रिया करना आसान है, परंतु परमात्मा के वचनों पर निशंक श्रद्धा होना अति कठिन है।

1219. धर्म का प्रत्यक्ष फल चित्त की प्रसन्नता है।

1220. कर्म सत्ता का नियम है, बे गुनाह को कभी सजा नहीं और गुन्हेगार को रहम नही।

1221. धर्मी आत्मा पाप प्रवृत्ति से घबराती है पाप के फल से नहीं।

1222. पशु को रखने के लिए चारों ओर वाड ही बस है। परंतु मनुष्य को रखने के लिए चारों ओर दिवाल एवं ऊपर छत जरुरी है, उसी प्रकार आत्मा की रक्षा के लिए चारों ओर नियम रुपी दिवाल तथा सिर पर गुरु का छत्र जरुरी है।

1223. साधु बनने का उद्देश्य होना चाहिए स्वादु बनने का नहीं।

1224. द्रव्य पूजा का अंतिम फल चारित्र धर्म की प्राप्ति है। श्रावक जीवन का लक्ष्य भी संयम प्राप्ति ही होना चाहिए।

1225. ज्ञान और क्रिया मोक्ष का मार्ग है।

सम्यग् दर्शन, ज्ञान व चारित्र मोक्ष का मार्ग है।

1226. ज्ञान और क्रिया दोनों हो तो ही इष्ट की प्राप्ति हो सकती है।

1227. एक जीव अनंत सुख को प्राप्त करे, तब एक जीव अनंत दुःख से थोडा मुक्त हो सकता है।

1228. निगोद में अपने 1 श्वासोश्वास में 17.5 भव हो जाते हैं ।

1229. धन से भी ज्यादा कीमती गुण है, इसे प्रयत्न पूर्वक संभालना जरुरी है ।

1230. गुण लाने और दोष भगाने के लिए सबसे सरल उपाय-गुणानुरागी बनो । जो दोष हममें है, उसके विपरीत जो गुण जिसमें है उसकी अनुमोदना करों ।

1231. साधक आत्मा को अंधा, बहरा और गुंगा बनने को कहा है ।

1232. दूसरों के दुर्गुण और दोष तथा विजातीय रुप देखने मे अंधा बनना चाहिए ।

1233. दूसरों की निंदा और दुर्गुण सुनने में बहरा बनना चाहिए ।

1234. निंदा, गाली, अपशब्द बोलने का फल आगामी भव में गुंगा बनना है ।

1235. सोलहवां गुण विशेषज्ञता-गुण-दोष को जानना-धर्म की आराधना के लिए जरुरी है । भक्ष्य-अभक्ष्य तथा पेय-अपेय का विचार तथा उसके अनुरुप आचरण यह जानना अत्यंत जरुरी है ।

1236. अक्षरवाली थाली पर झूठा पानी अथवा थूंक लगे तो ज्ञान की विराधना होती है ।

1237. आज जो वस्तु अच्छी है, वह कल खराब हो जाएगी । देखने की भी इच्छा नहीं रहेगी । हम उस पर थू-थू करेंगे ।

और आज हम जिसको देखने की भी इच्छा नहीं करते है तो कल हमें सबसे अच्छी और प्रिय लगने लगेगी । सब पुद्गल की बाजी है ।

1238. पुद्गल तो प्रतिक्षण अपना स्वरुप बदल रहा हैं । तो इसमें क्या राग

करना और क्या द्वेष करना । पुद्‌गल तो बदल जाता है, परंतु राग-द्वेष से बंधे कर्म का फल हमे भुगतना ही पडता है ।

1239. मनुष्य शरीर औदारिक वर्गणा के पुद्‌गलों से बना है, इसके स्वभाव में परिवर्तन आता रहता है । इसलिए इसका कभी अभिमान करने जैसा नहीं हैं ।

1240. सत्रहवां गुण-वृद्धानुसरण-वृद्धों की प्रवृत्ति का अनुसरण करना ।

3 प्रकार के वृद्ध :– 1) वयोवृद्ध-जो वय से वृद्ध है, जिनके पास अनुभव ज्ञान है । 2) पर्याय वृद्ध-जो रत्नत्रयी की आराधना में पर्याय से बडे है और 3) ज्ञान वृद्ध-जो ज्ञान से बड़े है ।

1241. दान अर्थात् वस्तु का अपना अधिकार दूसरों को दे देना ।

1242. जीवन में ज्ञान आने के बाद विवेक प्रकट होता है ।

1243. प्रत्येक वनस्पति काय और साधारण वनस्पति काय में जीवों की संख्या का भेद सिर्फ जैन धर्म के शास्त्रो में ही है । अन्य धर्म तो सब वनस्पति को एक समान ही मानते हैं ।

1244. भूतकाल में हमारी आत्मा ने अनंत माता-पिता किये हैं । परंतु हम उनको पहिचानते नहीं । हम तो सिर्फ वर्तमान को ही देखते हैं ।

1245. वज्रस्वामीजी के हाथ में जब ओघा आया, तब वे नाचने लगे । उसी के अनुकरण में आज भी नूतन दीक्षित ओघा हाथ मे आने पर नाचते हैं ।

1246. आज के युग में व्यक्ति Machines से हर गंदगी को साफ कर सकता है । आँख, कान, नाक, शरीर के मैल को साफ करने के लिए भी Drops, Spray, Soaps, Shampoos आदि है । Operations करने के लिए भी Laser Technology है, परंतु मन को साफ करने के लिए कोई उपाय नहीं है । मन को साफ करने के लिए प्रायश्चित्त ही एक उपाय है ।

1247. मन को साफ करने के लिए अनित्यादि 12 भावनाएँ है ।

1248. जो अपूर्ण ज्ञानी होता है, वही अपने ज्ञान का प्रदर्शन करता है, पूर्ण ज्ञानी कभी भी ज्ञान का प्रदर्शन नहीं करते हैं ।

1249. नदी में थोडा पानी आ जाए तो वह मर्यादा तोड देती है, जबकि सागर में चाहे जितना पानी आ जाए फिर भी गंभीर रहता है ।

1250. पुण्य के उदय में सारी दुनिया वाह । वाह ! करती है, यावत् दुश्मन भी, और जब पाप का उदय आता है तब अपने भी पराये हो जाते है ।

1251. विशेषज्ञता अर्थात् किसी भी घटना के वस्तु के गुण-दोष देख कर उसमें संयम रखना है । न प्रशंसा न निंदा ।

1252. सबसे मीठी और सबसे कडवी वस्तु जबान है ।

1253. गुरु भगवंत का आसन बिछाना भी, गुरु महाराज का विनय है । उनके आने के पहले हाजिर होना आदि भी विनय है ।

1254. जो विनय की पराकाष्ठा जैन धर्म के व्यवहारों में बताई है, वह प्रक्रिया जगत में शायद कहीं नहीं मिलेगी ।

1255. विनय से श्रवण किया हुआ प्रवचन ही हमारे जीवन में उतरता है ।

1256. श्रद्धालु व्यक्ति के लिए देव और गुरु दोनों विनय और बहुमान के पात्र है ।

1257. क्रिया महत्वपूर्ण नहीं है, परंतु क्रिया के साथ जुडा हुआ भाव महत्त्वपूर्ण है ।

1258. उपधान में सुत्रों के 3 अधिकार मिलते हैं 1) उद्देश अर्थात् पढने का अधिकार 2) समुद्देश-आत्मसात् करने का अधिकार और 3) अनुज्ञा-दूसरों को पढाने का अधिकार ।

1259. श्रुत ज्ञान का ही उपधान होता है। अवधि आदि का नहीं।

1260. ``सुकृत जलाकर्षणे घटी माला।'' मोक्ष माला में 108 घडे होते है। वे पंच परमेष्ठी के 108 गुण के निमित्त से है। वे 108 गुण हमारी आत्मा में प्रकट हो, इस भाव से मोक्ष माला का परिधान होना चाहिए।

1261. जैसे अग्नि के कुंड में लकडी डालने से अग्नि कभी तृप्त नहीं होती, वैसे ही भोगों से भोग की वासना कभी तृप्त नहीं होती है।

1262. नरक गति में अत्यंत वेदना है, वहां पर क्रोध की बहुलता है, तिर्यंच गति में माया की बहुलता है, मनुष्यों में मान की बहुलता है तथा देवों में लोभ की बहुलता है।

1263. सांसारिक जीवन में मानसिक पीडा बहुत है, जबकि संयम साधु जीवन में मानसिक पीड़ा का नाम नहीं है।

1264. संसार में आत्मा अनादि काल से है, इसलिए आत्मिक दृष्टि से कोई बडा नहीं, कोई छोटा नहीं।

1265. किसी भी स्थान पर पहुँचने के लिए एक कदम ही पर्याप्त है। परंतु उस स्थिति पर पहुँचने के लिए हजारों कदम जरुरी है।

1266. एक क्षण मात्र में अपने सभी कार्य पूर्ण करने में समर्थ होने पर भी गौतम स्वामी हर कार्य गुरु (भगवान) को पूछकर ही करते थे।

1267. भगवान की वाणी में की हुई बातों को वे स्वतः जानते थे, फिर भी भगवान से ही अपनी शंका का समाधान करवाने के साथ ही भगवान से समाधान तथा भगवान की वाणी को विस्मयता से सुनते थे।

1268. गौतम स्वामी विनय के आदर्श थे। 1452 गणधरों में सर्वाधिक पुण्यशाली गौतम स्वामी थे।

20 स्थानक में भी गौतम पद की आराधना छट्ठ से करते है। वे गणधर होते हुए भी उनकी आराधना करने वाले तीर्थंकर बनते है।

1269. भगवान की आज्ञा के अनुसार गौतम स्वामी ने जो भी प्रवृत्ति की, उसमें उनको लाभ ही हुआ।

1270. विनय की Training के लिए, उपधान तप में रोज 100 खमासमणा दिए जाते है।

1271. वंदन करते समय हम जितने नीचे झूकते हैं, कुदरत हमको उतना ऊपर उठाती है।

1272. 19वाँ गुण-कृतज्ञता :- जो अपने पर हुए उपकार को जानता है वह कृतज्ञ-``कृतम् जानाति इति कृतज्ञः।''

1273. मकराणे की खान में से निकले हुए दो पत्थर ! एक बनती है-प्रभु प्रतिमा जिसकी लोग पूजा करते है। दूसरी सीढी पर जडी गई है, जिसपर लोग अपने चंपल घिसते है।

खान में से निकला हुआ सोना भी, जब तक अग्निपरीक्षा में पास न हो तब तक वह शुद्ध नहीं होता है।

1274. हम कष्टों से डरते हैं, परंतु जो व्यक्ति कष्टों को सहन करे, वही महान् बन सकता है। जो सहन नहीं करता, वह कभी महान् नहीं बन सकता।

1275. जैन धर्म महान् है क्योंकि इसकी आचार संहिता इस धर्म के कथन के अनुसार है। कथनी- करनी में कोई भेद नहीं।

1276. साधु जीवन में अमीर-गरीब का भेद नहीं है। सभी के लिए एक समान नियम व्रत। सभी के कपडे समान। विहार, गोचरी आदि चर्या भी सबको एक समान। कोई भेद-भाव नहीं।

1277. विदेशी लोगों को भारत देश और भारतीय संस्कृति से लगाव है, जानने की इच्छा है, जबकि भारतीय लोगों को पश्चिमी देश का आकर्षण है ।

1278. सभी कष्टों को सहन करने का मंत्र-'मैं देह नहीं हूँ, आत्मा हूँ। देह से भिन्न हूँ।' यह अन्यत्व भावना है ।

1279. जैसे तलवार म्यान में रहती है, वैसे ही आत्मा शरीर में रहती है। तलवार म्यान से भिन्न है, उसी तरह आत्मा शरीर से भिन्न है ।

1280. खंधक मुनि की जिन्देजी चमडी उतार दी गयी, तभी वे अन्यत्व भावना करते है कि मैं और मेरा शरीर दोनों भिन्न है ।

1281. शरीर को चाहे जितना निरोगी बनाओ, अंत में तो मिट्टी में ही मिलने वाला है ।

1282. जिस घर को नई नई वस्तुओं से सजाते हैं, उस घर को भी एक क्षण में छोडकर जाना पडता है ।

1283. आजादी के पहले, देश भर में दुध-दही की नदियाँ बहती थी, आज कतलखानों में खून की नदियाँ बहती है ।

1284. आज कई माताओं ने अपने मातृत्व को खत्म कर दिया है, आज माँ खुद की संतान को मारने के लिए तैयार हो जाती है ।

1285. स्त्री जीवन में दो बडे पाप है 1) शील का खंडन और 2) गर्भपात। शील के खंडन के कारण ही गर्भपात का पाप खूब बढा है ।

1286. खान-पान के शौक के कारण भी आज अनेक प्राणिज तत्वों को खाया जा रहा है ।

1287. दूसरों के किए हुए उपकारों को जो भूल जाए वह कृतघ्न कहलाता है ।

1288. माता-पिता और स्वामी का उपकार सिर्फ एक भव का है, जबकि गुरु का उपकार भवों भव का है ।

1289. जिसने हमको धर्म में आगे बढाया, ऐसे गुरु का उपकार, करोडों भव तक उनकी सेवा करने पर भी चुकाया नहीं जा सकता है ।

1290. जय वीयराय सूत्र में एक प्रार्थना है मुझे सद्‌गुरु की प्राप्ति हो, और जब तक मैं संसार में हूँ तब तक मुझे गुरु की आज्ञा का पालन करने का सामर्थ्य मिले ।

1291. आज लोग अपने घरों में कुत्तों को पालते है, और अपने माँ-बाप को वृद्धाश्रम में भेजते है ।

1292. पृथ्वी पर दो प्रकार के लोगो का भार है, 1) विश्वास घाती और 2) कृतघ्न ।

1293. जीवन जीने में हमें कितने जीवों का उपकार लेना पड़ता है । श्वास लेने में हवा के जीवों का, रसोई बनाने मे 6 काय के जीवों का ।

1294. सिंह आदि क्रूर जानवर मरकर चौथी नरक में जा सकते हैं, जबकि पुरुष मरकर 7वीं तथा स्त्री छट्ठी नरक तक जा सकती है ।

1295. सामान्य व्यक्ति दो कारणों से पाप छोडता है 1) लोभ और 2) भय से ।

1296. प्राणी सृष्टि में सबसे ज्यादा पाप करने वाला प्राणी मनुष्य है और इसलिए वह मरकर 7वीं नरक तक जा सकता है ।

1297. मनुष्य देवताओं को भी तंत्र के बल पर वश कर सकता है ।

1298. सबसे ज्यादा शक्तिशाली मन मनुष्य के पास है ।

1299. अनुत्तर देव विमान से सिद्ध शिला की दूरी 12 योजन है परंतु वहाँ जाने के लिए उसे मनुष्य भव में आना ही पड़ता है ।

1300. देवताओं का ज्यादा से ज्यादा विकास चौथे गुण स्थानक तक, तिर्यंचों का ज्यादा से ज्यादा विकास पांचवे गुण स्थानक तक। नारक का ज्यादा से ज्यादा विकास चौथे गुण स्थानक तक। मनुष्य का ज्यादा से ज्यादा विकास मोक्ष 14 वें गुण स्थानक तक हो सकता है।

1301. अति सुख और अति दुःख दोनों परिस्थिति में समता भाव रखना कठिन है।

1302. सुख में राग सहज है, दुःख में द्वेष सहज है।

1303. भगवान महावीर ने कहा है-सभी जीव जीना पसंद करते है, मरना कोई पसंद नहीं करता, परंतु नरक के जीव सतत मरण पसंद करते हैं।

1304. 63 शलाका पुरुषों में स्त्री को कोई स्थान नहीं हैं। अनंत कालचक्र में आश्चर्य है कि मल्लिनाथ भगवान स्त्री रुप में पैदा हुए थे।

1305. आत्मा के बिना शरीर की कोई कीम्मत नहीं, उसी प्रकार शील बिना स्त्री की कीम्मत नहीं है।

1306. शीलवती महासतियों को देवता भी वंदन करते हैं।

1307. पंच परमेष्ठी में स्त्री को सिर्फ दो पद, दूसरा और पांचवां और पुरुष को पाँचों पद मिल सकते हैं।

1308. देवताओं के शरीर के आगे मनुष्य का शरीर एकदम तुच्छ है, परंतु मन बहुत मजबूत है।

1309. प्रकृति के सारे पदार्थ परोपकार की प्रेरणा देते है।

1310. सूरज प्रकाश देता है, बादल पानी देता है, नदी पानी देती है, वृक्ष छाया और फल देते है।

आम आदि वृक्ष, फल पैदा करते हैं, परंतु एक भी फल खुद नहीं खाते, दूसरों को ही देते है ।

1311. नाव के चारों ओर पानी ही पानी है, फिर भी नाव को जो समर्पित है वह उसका रक्षण करती है । उसी तरह भवसागर चाहे जितना खतरनाक हो, धर्म को समर्पित रहनेवाला बच जाता है ।

1312. स्वयं भोजन करना स्वार्थ है, दूसरों को भोजन कराना परोपकार है ।

1313. हर जीव की एक ही इच्छा, मेरा दु:ख दूर हो और मुझे हमेशा सुख मिले ।

1314. आचारांग सूत्र में कहा है, `जीव ! तुमने दूसरे को नहीं मारा है, अपने आपको मारा है क्योंकि दूसरे को मारने से जो कर्म का बंध होता है, वह कर्म तुझे अनेक भवों तक मारेगा ।'

1315. सामान्य स्थान में किए हुए पुण्य और पाप से अनेक गुणा पुण्य और पाप तीर्थ स्थान पर करने से बंधता है ।

1316. हमारा कोई भी धर्म कार्य सिद्ध होता है तो उसमें देव-गुरु की कृपा ही सबसे बडा कारण है ।

1317. धर्म कार्य बिगड जाए तो वहाँ अपने पाप कर्म का उदय समझना चाहिए ।

1318. कोई व्यक्ति हमें तकलीफ नहीं देता है, वह तो सिर्फ निमित्त मात्र है । मुख्य कारण तो अपना कर्म ही है ।

1319. धर्म की क्रिया करते समय अधर्म का विचार आ सकता है, परंतु अधर्म की क्रिया करते समय धर्म का विचार विरलों को ही आता है ।

1320. धर्म का मनोरथ करने से भी उसका फल प्राप्त होता है ।

1321. दुनिया कहती है कि `मानव मात्र भूल का पात्र' जबकि भगवान का धर्म कहता है, `छद्मस्थ मात्र भूल का पात्र ।'

1322. मासक्षमण करना सरल है, परंतु की हुई भूल को भूल के रुप में स्वीकार करना अत्यंत कठिन है ।

1323. तीर्थंकर भगवान के लग्न की क्रिया, राज्याभिषेक, संसार के सभी व्यवहार में उनको पाप का बंध नहीं होता है बल्कि कर्म का क्षय होता है ।

1324. त्याग में यदि मन जुडा है तो ही वह सच्चा त्याग है ।

1325. शुभ विचार आना कठिन है, परंतु उसे टिकाए रखना अत्यंत कठिन है ।

1326. सोने के मंदिर बनाए व रत्नों की प्रतिमा भराए, उससे भी अधिक पुण्य का बंध शील धर्म के पालन में है ।

1327. काया से धर्म आसान है, पाप कठिन है, मन से पाप आसान हैं, धर्म कठिन है ।

1328. पानी में थोडी भी शक्कर डालने पर पानी मीठा हो जाता है, परंतु जीभ पर चाहे जितनी शक्कर डालों, वह कोरी की कोरी है ।

1329. दुनिया का सबसे बडा विजेता कौन ? जिसने रसनेन्द्रिय को जीत लिया है ।

1330. दान में धन पर विजय है, शील में स्पर्शनेन्द्रिय पर विजय है, तप में पाँचों इन्द्रियों पर विजय है जबकि भाव में मन पर विजय है ।

1331. मनुष्य को मिली चार शक्तियाँ 1) तन 2) वचन 3) मन 4) धन, इनसे हम परोपकार कर सकते है ।

1332. श्रावक तथा साधु जीवन की आराधना का मुख्य लक्ष्य मोक्ष होना चाहिए ।

1333. हर आराधना में मुख्य उद्देश्य मोक्ष ही होना चाहिए ।

1334. मुम्बई मे Slow और Fast दोनों प्रकार की Trains दोडती हैं, परंतु दोनों की दिशा एक ही, उसी तरह श्रावक जीवन Slow Train के समान है, साधु जीवन Fast Train के समान है, परंतु लक्ष्य दोनो का मोक्ष ही है ।

1335. Newspaper में Article लिखनेवाले को अपना खुद का स्वार्थ है-वे पैसों के बदले लेख लिखते हैं । जबकि हमारे शास्त्रकार परमर्षि खुब मेहनत करके, स्व-पर उपकार के लिए शास्त्रों की रचना करते हैं ।

1336. पुण्य का पुंज इकट्ठा करना हो तो 'नमामि सव्व जिणाणं' और पाप राशि खत्म करना हो तो 'खमामि सव्व जीवाणं' ।

1337. शंख की ध्वनि वातावरण की अशुद्धि खत्म करती है ।

1338. आँख का सदुपयोग 1) प्रभु दर्शन-गुरु दर्शन 2) जीवदया और 3) स्वाध्याय ।

1339. कर्णेन्द्रिय की प्राप्ति खूब अल्प जीवों को ही होती है । जो जीव पंचेन्द्रिय है, उसे ही कर्णेन्द्रिय की प्राप्ति हो सकती है ।

1340. आज जितना साहित्य छपता है, उसमें अच्छा साहित्य खुब कम छपता है ।

खराब साहित्य तो बहुत है, हमें बचना है तो उससे दूर रहना जरुरी है ।

1341. आत्मा में अनादि काल से आहार, भय, मैथुन और परिग्रह संज्ञा है । निमित्त मिलने पर ये बढती है ।

1342. आत्मा अविनाशी, अणाहारी, अभयी, निर्वेदी, निष्परिग्रही है, परंतु कर्म के कारण आहार, भय, मैथुन और परिग्रह के वश रहना पडता है ।

1343. हिन्दुस्तान की सच्ची संपत्ति यहाँ के संत है ।

1344. जैसे पुराने वस्त्रों को छोडकर हम नया वस्त्र लेते है, वैसे ही आत्मा जीर्ण शरीर को छोडकर दूसरा शरीर ग्रहण करती है ।

1345. मोक्ष अर्थात् मुक्ति.

जगत् के सारे जीव कर्म राजा की कैद में बंधे हुए हैं ।

1346. श्रावक को घर में रहना पडे तो पानी में रहे पत्थर की तरह रहो, शक्कर की तरह नहीं ।

1347. जब तक आत्मा के साथ शरीर है, तब तक आहार, विहार आदि सभी की झंझट है ।

1348. मुक्ति रुपी कन्या को वरने के लिए मोक्ष माला है ।

1349. मुक्ति रुपी कन्या एक ऐसी कन्या है, जिसके शरीर नहीं, इसलिए उसके अनंत पति है ।

1350. श्रावक को सुबह जगते ही देव और गुरु को याद करना चाहिए और इसलिए नवकार गिनना है, जिसमें देव और गुरु दोनों को वंदन हो जाता हैं ।

1351. श्रावक को सूर्योदय से चार घडी पहले निद्रा त्याग करना चाहिए ।

1352. नमो अरिहंताणं पद में सभी अरिहंतों का समावेश हो जाता है, फिर भी हमारे विशेष उपकारी परमात्मा का दर्शन वंदन जरुर करना चाहिए ।

1353. हम उगते सूर्य को देख सकते है, उसमें मुख्य कारण देव-गुरु की कृपा है ।

1354. नवकार के तीसरे, चौथे और पांचवे पद में सभी गुरु भगवंतों को वंदन हो जाता है, फिर भी हमारे आसन्न उपकारी गुरु को अवश्य वंदन करना चाहिए ।

1355. गुरु हमारे लिए भवसागर में नाव समान है-`गुरु बिन भव निधि तरही न जाए ।'

1356. जो भगवान का दास बनता है, उसे भगवान अपने समान बना देते है ।

1357. हमारा वेश हमारी उम्र और आय के अनुसार होना चाहिए ।

1358. तीर्थ मे क्यों जाना ? संसार से संबंध छोडने के लिए और भगवान से संबंध जोडने के लिए ।

1359. हम जिस भूमि में जाते है, उसके अनुसार हमें भाव आते है ।

1360. श्रावक को आवश्यक सूत्र, चार पयन्ना और दीक्षार्थी हो तो दशवैकालिक के चार अध्ययन सूत्र-अर्थ से और पाँचवा अध्ययन अर्थ से पढने की अनुमति है ।

1361. आगमों का संपूर्ण सार पू. यशोविजयजी विरचित 3 स्तवनों में, सवासो, डेढसो और 350 गाथा के स्तवन में है । इनका स्वाध्याय करने से आगमों का सार प्राप्त होता है ।

1362. संवेग रंगशाला ग्रंथ सिर्फ समाधि मृत्यु के लिए है ।

1363. जैन शासन में मृत्यु को खराब नहीं माना है, परंतु जन्म को खराब माना है । जो व्यक्ति जन्म लेता है वह अवश्य मरता है ।

1364. 4 प्रकार की मृत्यु 1) भोगान्त 2) रोगान्त 3) शोकान्त और 4) योगांत ।

1365. रोग के कारण मृत्यु में समाधि न रहे तो दुर्गति होती है ।

1366. शोक के कारण मृत्यु होने पर भी दुर्गति होती है ।

1367. आयंबिल अर्थात् अस्वाद व्रत । भोजन भी करना और स्वाद नहीं लेना ।

1368. **आयंबिल में जीभ के अनुसार नहीं बल्कि पेट के अनुसार भोजन है ।**

1369. रोज उपवास करना शक्य नहीं है, परंतु रोज आयंबिल शक्य है ।

1370. **मानवी के मन में उतार चढाव तो होते रहते है । भगवान महावीर स्वामीजी के 14000 शिष्यों में भी सिर्फ एक धन्ना अणगार वृद्धिंगत परिणामी थे ।**

1371. मन शैतान है-उसे हमेशा कार्य में जोडे रखना जरुरी है ।

1372. **शुद्ध आयंबिल का उपवास से भी ज्यादा महत्त्व है । उसमें सिर्फ चावल और उस पर 4 अंगुल पानी ।**

1373. शरीर को अनुकुल आहार देने से राग भाव पुष्ट होता है, तथा कर्म का बंध होता है ।

1374. **जिसका भोजन सरस, उसका भजन निरस और जिसका भोजन निरस, उसका भजन सरस ।**

1375. कायोत्सर्ग में काया का उत्सर्ग है ।

1376. **चैत्य का अर्थ मंदिर और प्रभु प्रतिमा भी होता है ।**

1377. इरियावहियं में प्रायश्चित्त है, वह लघु प्रतिक्रमण है ।

1378. **जन्मे हुए भगवान का मेरु पर्वत पर देवता एक करोड 60 लाख कलश द्वारा अभिषेक करते हैं । भगवान के अभिषेक के बहाने हमारी आत्मा निर्मल बनती है ।**

1379. भगवान की आराधना या आशातना करो, भगवान को कोई लाभ-नुकसान नहीं परंतु अपनी आत्मा को जरुर लाभ-नुकसान होता है ।

1380. **2.5 द्वीप में उत्कृष्ट से 170 भाव तीर्थंकर होते है ।**

1381. नवकार महामंत्र का 9 लाख बार जाप करने से दुर्गति के द्वार बंध हो जाते है । विधि सहित 1लाख बार जाप करने से तीर्थंकर नाम कर्म का बंध होता है ।

1382. नवकार के एक-एक अक्षर पर 1008 अधिष्ठायक देवों का वास है ।

1383. नवकार के अ से अष्टापद, सि से सिद्धाचल, आ से आबु, उ से उज्यन्त गिरी, स से सम्मेत शिखरजी ।

1384. जैन लोग पूर्व दिशा को प्रधानता देते है, मुस्लिम लोग पश्चिम को प्रधानता देते है ।

1385. जाप करने के लिए वस्त्र भी सात्त्विक होने चाहिए । भडकिले कपडो में जाप नहीं होना चाहिए ।

1386. जाप में आसन-सफेद और ऊनी होना चाहिए और पद्मासन में बैठना चाहिए ।

1387. मन को स्वच्छ और निर्मल बनाने के लिए नवकार मंत्र है ।

1388. दक्षिण दिशा में जाप-भोजन आदि नहीं करने चाहिए । उस ओर पाँव करके भी नहीं सोना चाहिए ।

1389. मन को शुद्ध करे वह भावना । मन को भावित करने के लिए मैत्र्यादि भावनाएँ बताई है ।

1390. 'परहितचिन्ता मैत्री' । दूसरे के हित की चिन्ता करना मैत्री भाव है ।

1391. जगत् दु:ख को भयंकर मानता है, जैन दर्शन दोष को भयंकर कहता है । दोष के कारण ही दु:ख आते है । इसीलिए शिवमस्तु की भावना में जगत के सारे जीवों के दोष नष्ट करने की प्रार्थना है ।

1392. पंचपरमेष्ठी की भीतर में स्थापना करनी हो तो मन साफ करना जरुरी है, जो सबसे कठिन है ।

1393. सिर्फ झुकना नमस्कार नहीं है, पशु हमेशा झुका हुआ है । नमस्कार करने योग्य को नमस्कार नहीं करने की यह सजा है ।

1394. शक्ति, संपत्ति और सत्ताधारी को हर कोई झुकता है, परंतु वास्तव में इनके त्यागी को झुकना योग्य है ।

1395. पात्रता विकसित करो, संपत्ति और प्रतिष्ठा अपने आप आएगी ।

1396. दीक्षा के लिए वैसे तो 15 गुण चाहिए परंतु दो गुण खूब जरुरी 1) वैराग्य और 2) समर्पण भाव ।

1397. ज्ञान पढने से नहीं, गुरुकृपा से प्राप्त होता है ।

1398. अरिहंत से आज्ञापालन का बल, सिद्धों से निर्लेप भाव, आचार्यो से आचार पालन, उपाध्याय से विनय गुण और साधु से सहायता गुण प्राप्त करना हैं ।

1399. पंच परमेष्ठी में सर्वाधिक गुणवान सिद्धात्मा है । अरिहंत पर भी अघाति कर्म लगे हुए हैं । अघाति कर्म आत्मा के मूल गुणों का घात नहीं करते हैं ।

प्रवचन प्रभावक परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय **रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** द्वारा आलेखित
199 पुस्तकों में से प्राप्य हिन्दी भाषा में जैन धर्म का अमूल्य खजाना

Sr. No.	पुस्तक क्रमांक	पुस्तक का नाम	मूल्य
1.	13-14	शांत सुधारस-हिन्दी विवेचना-भाग-1-2	140/-
2.	34-35	आग और पानी-भाग-1-2	115/-
3.	36	शत्रुंजय यात्रा (तृतीय आवृत्ति)	40/-
4.	42	भक्ति से मुक्ति (पांचवी आवृत्ति)	40/-
5.	61	Panch Pratikraman Sootra	60/-
6.	84	प्रभु दर्शन सुख संपदा	60/-
7.	97	पर्युषण अष्टाह्निका प्रवचन	100/-
8.	100	बीसवी सदी के महान योगी	300/-
9.	104	कल्पसूत्र के हिन्दी प्रवचन	150/-
10.	109	आओ ! उपधान पौषध करें !	45/-
11.	118	शंका समाधान भाग-2	40/-
12.	123	जीव विचार विवेचन (तृतीय आवृत्ति)	60/-
13.	128	विविध-तपमाला	100/-
14.	136	आओ ! पर्युषण प्रतिक्रमण करें	90/-
15.	140	वैराग्य शतक	80/-
16.	141	गुणानुवाद	70/-
17.	144	आओ संस्कृत सीखें भाग-1	60/-
18.	145	आओ संस्कृत सीखें भाग-2	70/-
19.	146	आध्यात्मिक पत्र	60/-
20.	153	ध्यान साधना	40/-
21.	156	इन्द्रिय पराजय शतक	50/-
22.	161	अजातशत्रु अणगार	100/-
23.	163	The way of Metaphysical Life	60/-
24.	164	आओ ! प्राकृत सीखें भाग-1	125/-
25.	165	आओ ! प्राकृत सीखें भाग-2	85/-
26.	166	आओ ! भाव यात्रा करें !! भाग-2	60/-
27.	167	Pearls of Preaching	60/-
28.	168	नवकार चिंतन	60/-
29.	169	आओ ! दुर्ध्यान छोड़े !! भाग-1	64/-
30.	170	आओ ! दुर्ध्यान छोड़े !! भाग-2	70/-
31.	172	रत्न-संदेश-भाग-1	150/-
32.	174	रत्न-संदेश-भाग-2	150/-
33.	175	My Parents	60/-
34.	176	श्रावकाचार-प्रवचन भाग-1	125/-
35.	177	श्रावकाचार-प्रवचन भाग-2	125/-
36.	178	परम-तत्व की साधना भाग-2	150/-
37.	179	परम-तत्व की साधना भाग-3	160/-
38.	182	नवपद आराधना	80/-
39.	183	आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-1	125/-
40.	186	आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-2	175/-
41.	188	चौबीस तीर्थंकर चरित्र-भाग-1	150/-
42.	189	चौबीस तीर्थंकर चरित्र-भाग-2	150/-
43.	190	संस्मरण	50/-
44.	191	संबोह-सित्तरि (वैराग्य का अमृत कुंभ)	70/-
45.	192	विवेकी बनों !	90/-
46.	193	आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-3	150/-
47.	194	लघु संग्रहणी (जैन भूगोल)	100/-
48.	195	समाधि मृत्यु	50/-
49.	102	कर्मग्रंथ (भाग-1)	100/-
50.	196	कर्मग्रंथ (भाग-2)	70/-
51.	197	कर्मग्रंथ (भाग-3)	55/-
52.	198	आदर्श-कहानियाँ	60/-
53.	199	प्रवचन-वर्षा	60/-

Shubhay 98205 30299